गीताञ्जलि

नोबेल पुरस्कार प्राप्त रवीन्द्रनाथ टैगोर
की सभी प्रमुख भाषाओं में
अनूदित अमर कृति
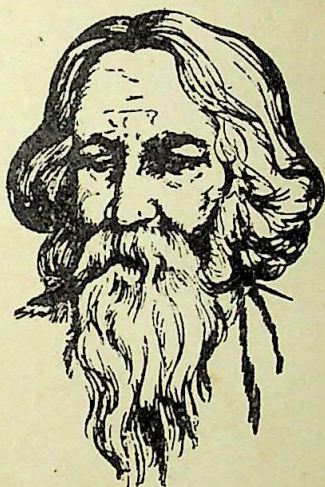
'गीतांजलि' रवीन्द्रनाथ ठाकुर की वह अमर कृति है जिसपर उन्हें संसार का सबसे बड़ा साहित्यिक पुरस्कार 'नोबल प्राइज़' मिला था, और यही वह पुस्तक है जिसके कारण रवि बाबू का यश देश-विदेश में आज तक फैला हुआ है। 'गीतांजलि' का अनुवाद संसार की प्रायः सभी भाषाओं में हो चुका है।

'गीतांजलि' के गीत दिव्य भावनाओं से भरे हुए हैं, फिर भी उनमें इतनी सादगी है कि वे पाठक के हृदय को अनायास छू लेते हैं। रवीन्द्र की कविता में अलौकिक प्रकाश की निराली छटा है जो मन के अंधेरे कोने को आशा और उल्लास से भर देती है।

हिन्द पाकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटिड
सस्ते मूल्य पर हिन्दी में उत्कृष्ट मौलिक
और अनुवादित पुस्तकें प्रकाशित
करने वाली सर्वप्रथम भारतीय संस्था है

गीताञ्जलि

रवीन्द्रनाथ टैगोर

हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटिड

जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली–३२

अनुवादक

सत्यकाम विद्यालंकार

GEETANJALI : POETRY

RAVINDRA NATH TAGORE

मूल्य : एक रुपया

वन्दना

[आमार माथा नत करेदाओ]

मेरा मस्तक अपनी चरण-धूलि तक झुका दे !
प्रभु ! मेरे समस्त अहंकार को आंखों के पानी में डुबा दे !
अपने झूठे महत्त्व की रक्षा करते हुए मैं केवल अपनी लघुता दिखाता हूं।
अपनी ही परिक्रमा करते-करते मैं प्रतिक्षण क्षीण-जर्जर होता जा रहा हूं।
मेरे समस्त अहंकार को आंखों के पानी में डुबा दे !
मैं अपने सांसारिक कार्यों में अपने को व्यक्त नहीं कर पाता।
प्रभु ! मेरे जीवन-कार्यों में तू अपनी ही इच्छा पूरी कर।

मैं तुझसे चरम शांति की भीख मांगने आया हूं।
मेरे जीवन में अपनी उज्ज्वल कांति भर दे !

मेरे हृदय-कमल की ओट में तू खड़ा रह।
प्रभु ! मेरा समस्त अहंकार मेरे आंखों के पानी में डुबा दे।

निष्ठुर दया

[आमि बहु वासनाय प्राणपणे चाई]

मेरी वासनाओं की आग का अन्त नहीं और मेरा करुण रुदन भी
असीम है, फिर भी तूने कठोर अंकुश का प्रयोग कर मुझे
उनमें भस्म होने से बचा लिया! तेरी यह निष्ठुर दया मेरे
जीवन के कण-कण में पूर्ण रूप से व्याप्त है।

मैं तुझसे आकाश, प्रकाश, शरीर, मन, प्राण, किसीकी भिक्षा
नहीं मांगता, केवल यही चाहता हूं कि मुझे प्रतिदिन की
लालसाओं से बचने योग्य बना दे। यही मेरे लिए तेरा महा-
दान होगा।

तेरी खोज में मैं कभी थकी-अलसाई आंखों से और कभी अध-
जगा-सा तेरे मार्ग पर चलता जाता हूं।
निर्मोही! तू मेरे सामने से हटकर ओट में हो जाता है। इसका
रहस्य समझ गया।
निर्बल और निराधार वासनाओं के मायाजाल से बचाकर तू
मुझे अपने पूर्ण मिलन के योग्य बना रहा है।
तेरी इस निष्ठुर दया का मर्म मैं पहचान गया, प्रभु! पूरी
तरह पहचान गया।

परिचय

[कतो आजानारे जानाइले तुमि]

कितने ही अनजानों से तूने मेरा परिचय कराया है।
कितने ही पराये घरों में तूने मुझे निवास का स्थान दिया है।
बन्धु ! तू दूरस्थों को निकट और परकीयों को आत्मीय
बनाता है।

पुराना घर छोड़कर अपरिचित घर में जाते हुए मैं चिन्तित हो
गया कि वहां मेरा अपना कौन होगा !
यह बात भी भूल गया कि उस नई जगह भी मेरे साथ तू तो वही
चिरपरिचित होगा जिसे आत्मीय कह सकूंगा।
बन्धु ! तू दूरस्थों को निकट और परकीयों को आत्मीय
बनाता है।

जीवन; मरण, इहलोक, परलोक; जहां भी तू मुझे ले जाएगा
वहां जन्म-जन्मान्तरों से परिचित तेरा साथ तो रहेगा ही।
तुझसे परिचित होकर किससे अपरिचित रहूंगा ? कहां जाने
का निषेध होगा ? कहां जाने से भय लगेगा ?
तू समस्त विश्व को एकत्र करके उसकी रक्षा के लिए जाग
रहा है।
बन्धु ! तू दूरस्थों को निकट और परकीयों को आत्मीय
बनाता है।

वरदान

[विपदे मोरे रक्खा कोरो]

प्रभो! 'विपत्तियों से रक्षा करो'—यह प्रार्थना लेकर मैं तेरे द्वार पर नहीं आया, विपत्तियों से भयभीत न होऊं—यही वरदान दे!

अपने दु:ख से व्यथित चित्त को सान्त्वना देने की भिक्षा नहीं मांगता, दु:खों पर विजय पाऊं, यही आशीर्वाद दे—यही प्रार्थना है।

तेरी सहायता मुझे न मिल सके, तो भी यह वर दे कि मैं दीनता स्वीकार करके अवश न बनूं!

संसार के अनिष्ट-अनर्थ और छल-कपट ही मेरे भाग में आए हैं, तो भी मेरा अन्तर इन प्रतारणाओं के प्रभाव से क्षीण न हुआ।

'मुझे बचा ले,' यह प्रार्थना लेकर मैं तेरे दर पर नहीं आया, केवल संकट-सागर में तैरते रहने की शक्ति मांगता हूं।

'मेरा भार हल्का कर दे,' यह याचना पूर्ण होने की सान्त्वना नहीं चाहता, यह भार वहन करके चलता रहूं—यही प्रार्थना है!

सुख-भरे क्षणों में नतमस्तक हो तेरे दर्शन कर सकूं।

किन्तु दु:ख-भरी रातों में जब सारी दुनिया मेरा उपहास करेगी, तब मैं शंकित न होऊं—यही वरदान चाहता हूं!

अन्तर्विकास

[अन्तर मम विकशित कोरो]

हे जीवित विश्व के जीवन ! मेरा अन्तर विकसित करो ! निर्मल करो, उज्ज्वल करो, सुन्दर करो, जाग्रत् करो, निर्भय और उद्यत करो, निरालस और शंकारहित करो !

हे जीवित विश्व के जीवन ! मेरा अन्तर विकसित करो !

मेरा अन्तःकरण अखिल विश्व के समान उन्नत करो, मुझे बन्धनमुक्त करो !

मेरे सब कामों में तेरा उल्लास-भरा गीत भर जाए !
अपने चरण-कमलों पर मेरा चित्त स्थिर करो !
मुझे आनन्दित करो, आनन्दित करो !

हे जीवित विश्व के जीवन ! मेरा अन्तर विकसित करो !

नित्य नवीन

[तुमि नब नब रूपे एशो प्राणे]

तू नित्य नये-नये रूपों से मेरे प्राणों में आ, प्रियतम !
गंध में आ, वर्ण में आ, शरीर में रोमांचित स्पर्श बनकर आ,
चित्त में अखंड हर्ष की सुधा बनकर आ,
मेरे मुग्ध मुंदे नयनों में आ, प्रियतम ! मेरे प्राणों में नित्य
नये-नये रूपों में आ !

हे निर्मल, हे उज्ज्वल, हे मनोहर, आ !
हे सुन्दर, हे स्निग्ध, हे प्रशांत, आ !
मेरे सुख-दुःख में आ, नित्य नैमित्तिक कामों में आ, सब कामों
का चरम लक्ष्य बनकर आ !

नित्य नये-नये रूपों में मेरे प्राणों में आ !

सागर में ज्वार

[आनंदेरि सागर थेके]

आनंद-सागर में आज ज्वार आया है—
सब जन तेरी पतवार पकड़े बैठे हैं,
जितना बने उतना बोझ लाद लो, हमारी दुःख-भरी नाव
पार करो !

लहरों पर तैरकर हम पार जाएंगे, प्राण जाएं तो जाने दो !
आनंद-सागर में आज ज्वार आया है !

कौन है जो पीछे से पुकार रहा है ?
कौन है जो आगे बढ़ने से रोक रहा है ?
इस भय से हम पहले ही परिचित हैं।

किसीके शाप, किसीके ग्रह-दोष ने हमें सुख की ऊंची शिला
पर बिठा दिया है।
लंगर की डोरी हमने खींच ली है और गाते-गाते चल पड़े हैं।

सोने की थाली में

[तोमार सोनार थालाय साजबो आज]

आज तेरी सोने की थाली को मैंने अपने दुःख-भरे आंसुओं की माला से सजाया है !

माता ! आज तेरे कण्ठ में मैंने मोतियों का हार गूंथकर डाला है !

तेरे चरणों में चन्द्र-सूर्य के रत्न जड़े हुए हैं—और तेरे वक्ष पर मेरे दुःख-भरे आंसुओं की माला सुशोभित है।

धन और धान्य तेरी संपदा हैं,
उनका तू यथेष्ट उपयोग कर।
मुझे देना है तो दे दे ; नहीं देना तो न दे।

मेरे घर का विशेष उपहार तो मेरे दुःख ही हैं।
मूल्यवान उपहारों का तू सच्चा पारखी है और मुझे विश्वास है कि तुझे उनकी पहचान है।
—जिसमें तेरी खुशी हो, उसको स्वीकार कर ले।

अरुण किरण

[जननी तोमार अरुण चरण ध्वनि]

जननी ! तेरे दयास्निग्ध चरणों का निवास प्रभातकाल की अरुण किरणों में है।

तेरी मृत्युञ्जयी वाणी निःशब्द आकाश में व्याप्त है।

समस्त भुवन में व्याप्त तेरी मैं वंदना करता हूं !

तेरी पूजा के अर्घ्य में मैं आज अपना तन-मन-धन सब अर्पित करता हूं !

जननी ! तेरे दयार्द्र चरण अरुण किरणों में वास करते हैं।

रात्रि-प्रतीक्षा

[मेघेर पर मेघ जमे छे]

बादलों पर बादल छा गए, अंधेरा हो गया—
ऐसे समय मुझ अकेले को अपने द्वार के बाहर, प्रतीक्षा में
क्यों बिठा दिया, मेरे प्रियतम !

दिन ढलने पर, शाम की वेला में, मैं रोज़ विविध कामों और
विविध लोगों में व्यस्त रहता हूं !
आज इस अंधेरी शाम में यहां अकेला केवल तेरे दर्शन की
आशा पर ही बैठा हूं ।
तूने यदि आज भी अपने दर्शन न दिए, और मेरी निपट अपेक्षा
कर दी, तो यह बरसात की लम्बी रात कैसे कटेगी ?

दूर के उदास नीले आकाश को मैं निर्निमेष देख रहा हूं—
मेरा मन हवा में उड़ते बादलों के साथ व्योम-विहार कर
रहा है,
मुझ अकेले को द्वारों के बाहर क्यों बिठा दिया, मेरे प्रियतम !

विरह ज्योति

[कोथाय आलो]

प्रकाश—अरे, प्रकाश कहां है ?
विरह की ज्योत्स्ना से दीपक को प्रदीप्त कर ले !
बुझे हुए दीपक को रख दे, विरह की नई ज्योति से उसे
जला ले !

'ऐसा ही भाग्य में लिखा है,' यह कहने से मरण अच्छा है—
विरह की अग्नि से अपने दीपक को जला ले !

वेदना-रूपी दूती गा रही है,
'अरे प्राण !' तेरे लिए भगवान् जाग रहे हैं—
वे रात के घने अंधकार में अभिसार के लिए तुझे पुकार रहे हैं,
तुझे दुःखी देखकर वे तेरे प्रेम को गौरवान्वित करते हैं—
तेरे लिए भगवान जाग रहे हैं !

गगनांगन मेघों से भर गया है,
वर्षा का पानी झर-झर झर रहा है—
बुझे हुए दीप को विरह की ज्योति से जगा ले—

इस घोर रात्रि में मैं अकेला ही किसकी प्रतीक्षा में जाग
रहा हूं ?

बरसात का पानी झर-झर झर रहा है—
बिजली की चमक क्षण-भर के लिए होती है, नाव घने
अंधकार से घिरी है—

कौन जाने कितनी दूर से रात्रि के गंभीर गीत का स्वर आ
रहा है !

वह गीत मेरी सम्पूर्ण आत्मा को अपनी ओर खींच रहा है !

प्रकाश कहां है ? अरे, प्रकाश कहां है ?
अब विरह की अग्नि से ही दीपक को जगा ले, जगा ले, प्रेमी !
जगा ले।

मेघ गरज रहे हैं, वायु सां-सां करके चल रही है—
वेला निकल गई, अब कहीं जाना नहीं हो सकेगा—
निविड़ निशा आबनूस के काले पत्थर की तरह काली है,
ऐसी रात में प्राणों को प्रेम के दीपक से प्रकाशित कर ले !

अपने दीपक को विरह की अग्नि से ही प्रदीप्त कर ले !

सावन-घन

[आजि श्रावण-घन गहन-मोहे]

आज सावन के मेघों की घनी छाया में चुपके-चुपके, नीरव
रात की तरह; मौन प्रभात में सबकी नज़र चुराकर मत
चले जाना !

आज प्रभातकाल के नेत्र बंद हो गए हैं, पूर्व का कोलाहलपूर्ण
पवन व्यर्थ ही किसीको पुकार रहा है।
सदा जाग्रत् नीले आकाश का मुख मेघों की चादर ने ढक
लिया है।

वन-पर्वतों में आज गुंजन सुनाई नहीं देता।
सब घरों के द्वार आज बन्द हैं।
निर्जन रास्ते पर तू यहां अकेला क्यों किसकी प्रतीक्षा में
बैठा है ?

हे एकाकी सखा, प्रियतम ! मेरा द्वार खुला है—
स्वप्न की तरह मेरे सामने आकर लुप्त न हो जाना।

आषाढ़ की संध्या

[आषाढ संध्या घनिये एलो]

आषाढ़ की संध्या घनी हो गई,
दिवस का अवसान हो गया।

बरसात की जलधारा रह-रहकर बरस रही है—
झोंपड़ी के एक कोने में बैठा तू कौन-से विचार-सागर में डूबा है?
जल-कण से भीगी हवा जूही के वन में क्या सन्देश देने जा रही है?

वर्षा की जलधारा रह-रहकर बरस रही है—
आज हृदय में तरंग उठी है, किंतु मुझे जिस किनारे की तलाश है, वह कहीं नहीं मिलता।
जल-कणों से भीगे फूलों की सुगन्ध ने प्राणों को बेचैन कर डाला है।
अंधेरी रात के सारे रिक्त प्रहर आज किन स्वरों से भर सकूंगा?
कौन-सी मुरली खोने से मैं आज सब भूलकर व्याकुल हो उठा हूं?

वर्षा की जलधारा रह-रहकर बरस रही है—

अभिसार

[आजि झड़ेर राते···]

हे मेरे प्राण-सखा !
आज बरसात की झड़ी में प्रिय-मिलन के लिए कहां बाहर
चल दिया ?

आकाश निराशा में रो रहा है—
मेरी आंखों में आज नींद नहीं,
हे प्रियतम, द्वार खोलो, मैं तेरी ही राह देख रहा हूं।
बाहर तो कुछ भी दिखाई नहीं देता, राह कहां है, यही सोच
रहा हूं।

किसी दूर के नदी-तट पर, किसी भयानक जंगल के शिविर में
या किसी अंधकार में—
हे मेरे प्राण-सखा ! तू कहीं चला तो नहीं गया ?

स्वर-जाल

[तुमि केमन करे गान कोरो]

हे गुणवान ! तू कैसा मधुर गीत गाता है—
मैं केवल मुग्ध होकर सुन रहा हूं, केवल सुन रहा हूं !

तेरे गायन का प्रकाश जग के कण-कण में व्याप्त है—
तेरे स्वरों की गंगा पाषाणखंडों को भेदकर वेग से बह रही
है। मेरी इच्छा है कि मैं उन स्वरों में योग दूं, किंतु
मेरे कंठ के स्वर तेरे स्वरों को पकड़ नहीं पाते !

मेरे चारों ओर स्वरों का जाल बिछा है ; तूने मुझे इस
विलक्षण जाल में खूब बांध रखा है !

यदि देख न पाया

[जदि तोमार देखा न पाई प्रभु]

प्रभो ? यदि अब इस जीवन में तुझे न देख पाया—
यह बात मन में कांटे की तरह चुभती रहेगी कि तुझे नहीं देख पाया।
यह बात मैं भूल न सकूंगा; इसकी वेदना सोते-जागते, दिन-रात बेचैन करती रहेगी।
संसार के बाज़ार में मैंने कितने ही दिन बिता दिए, मेरे दोनों हाथ धन-धान्य से कितनी ही बार पूरी तरह भर गए; किन्तु उससे मुझे क्या मिला! यह बात मन में चुभती ही रही कि तुझे नहीं देख पाया, तुझे नहीं देख पाया।
आलस्यवश मैं जब रास्ते के किनारे बैठ गया और विश्राम के लिए बिछौना लगाने की व्यवस्था की, उसी समय स्मरण हो आया, यह प्रवास निष्प्रयोजन है। तुझे न देख पाऊंगा, यह बात मन से भूलती ही नहीं।
तू मुझे भूल न जाए; सोते-जागते मुझे यही चिंता रहती है। मेरे घर कितना ही हास्य हो; कितनी ही बांसुरी बजे; कितनी सज-धज से घर चमक उठे, किंतु 'तू नहीं आएगा—' यह बात याद आते ही दिल बैठ जाता है। यह वेदना कभी भूलती नहीं।
तू मुझे भूल न जाए—यह शंका सोते-जागते, दिन-रात मुझे सताती रहती है।

विरह-ताप

[हेरि अहरह तोमारि विरह]

विश्व के कण-कण में व्याप्त तुम्हारा विरह-ताप ही है जो
वन, पर्वत, आकाश, सागर के विविध रूपों में व्यक्त
हो रहा है।

यह विरह-दुःख ही है जो रात-भर निःशब्द तारों का दीपक
लेकर तेरा रूप व्यक्त कर रहा है !
और जो सावन-भादों की जलधारा में कांपते पत्तों का गीत
बनकर व्यक्त हो रहा है, यह भी तेरा विरह-दुःख
ही है।

यही उत्कट विरह जो मानवी भावनाओं, प्रेम, वासना, सुख,
दुःख के विविध रूपों में, घर-घर में छाया हुआ है।
मेरे गीतों में, स्वरों में भी यही विरह-ताप है जो मेरे हृदय
में भरा है और पिघल-पिघलकर बह रहा है।

घाट पर

[आर नाई रे बेला]

सखि री !
दिन ढल गया—
संध्या धरती पर उतर आई,
अब अपनी गागर भरने घाट पर चलना !

जलधारा के कल-कल स्वर ने संध्याकाल के आकाश में बेचैनी भर दी है।

वह स्वर मुझे अनवरत कह रहा है—
अपनी गागर भरने घाट पर चलना !

इस एकान्त रास्ते पर कोई भी आज नहीं रहा,
हवा चंचल हो उठी है,
प्रेम की नदी में तरंगें नाच रही हैं,
'मैं लौटकर आऊं, या न आऊं,' कुछ पता नहीं,
किससे मेरी भेंट हो जाए, कौन जाने ?
घाट पर पड़ी छोटी-सी नाव में बैठा अजनबी बंसी बजा रहा है—

अब अपनी गागर भरने घाट पर चलना !

मेघोन्माद

[आजि वारि झरे झर-झर]

आज जल-भार से भारी मेघों से पानी झर-झर करके बह
रहा है।
आकाश को खंडित करके जलधारा ज़मीन पर उतरी है,
आज इसका कहीं अन्त दिखाई नहीं देता।
वन, पर्वतों के ऊपर गर्जन करता, बादल झोंके दे रहा है।
मैदानों में पानी की लहरें स्वतन्त्र विहार कर रही हैं।
आज मेघों की केशराशि बिखरकर कितना सुन्दर नृत्य कर
रही है!

इस वर्षा में मेरा मन फिर बेकाबू हो गया, और बादलों के
संग झूमने लगा—
अंतःकरण में आज कैसा कलरव उठा है!
द्वार-द्वार के अवरोध छिन्न हो गए हैं!

आज सावन के बादलों में उन्माद भर गया है—
आज घर के बाहर कौन जाएगा ?

प्रिय व्यथा

[प्रभु तोमार लागि आंखि जागे]

प्रभु ! तेरी प्रतीक्षा में जागते आंखें थक गईं—
तुमसे भेंट नहीं हुई, तब भी मैं तेरी राह देख रहा हूं ;
यह राह देखना भी मुझे प्रिय ही लगता है ।
द्वार के बाहर, धूल में बैठा, मेरा भिखारी मन तेरी करुणा
की याचना कर रहा है ।

तेरी करुणा नहीं मिली, मेरी कामना तृप्त नहीं हुई ;
यह अतृप्त कामना भी मुझे प्रिय लगती है ।

इस जग के राज-पथ पर कितने ही सुख-दुःख-लीन पथिक मेरे
सामने से गुज़र रहे हैं ।
कोई मेरा साथी नहीं बनता, फिर भी मुझे यह आकांक्षा
बनी है ;
यह आकांक्षा भी मुझे प्रिय लगती है ।

चारों ओर अमृतजल से व्याकुल श्यामला पृथ्वी यही प्रेम-
क्रन्दन कर रही है—
तुझसे भेंट नहीं हुई, केवल व्यथा ही मेरे भाग में आई,
यह व्यथा ही मुझे प्रिय लगती है ।

प्रेम-संकेत

[एइ तो तोमार प्रेम]

प्रियतम ! मैं जानता हूं, यह तेरा प्रेम है जो पत्ते-पत्ते पर
स्वर्णाभा बनकर चमक रहा है !

जिससे अलसाए मेघ आकाश में झूम रहे हैं, सुवासित पवन
मेरे मस्तक पर जलकण बिखेर जाता है—
यह सब, हे मनहरण प्रभु ! तेरा ही प्रेम है।

आज प्रभात की आकाश-धारा मेरी आंखों में भर गई—
यह तेरा ही प्रेम-संकेत है जो जीवन के कण-कण को मिला है।

तेरा मुख नीचे झुका,
तेरे नेत्र मेरे नेत्रों से मिले—

मेरे हृदय ने तेरे चरणों का स्पर्श कर लिया !
प्रियतम ! मैं जानता हूं, यह तेरा ही प्रेम-संकेत है।

विश्व-सभा

[आमि हेथाय थाकि शुधु]

मैं यहां केवल तेरा गीत गाने के लिए आया हूं;
अपनी विश्व-सभा में मुझे गाने-भर की अनुमति दे दे !
प्रभु ! तेरे संसार के अन्य किसी भी काम के मैं योग्य नहीं,
मेरे निरुपयोगी प्राण केवल तेरे गीत के स्वरों में ही
व्यक्त होते हैं।

आधी रात की सुनसान वेला है,
देवालय में तेरी आरती हो रही है,
ऐसे समय हे स्वामी ! मुझे गाने का आदेश दे !

प्रभात की वेला में उषा की सुनहरी वीणा के तार बज उठेंगे,
तब तेरे दरबार में गीत गा सकूं, इतनी ही भिक्षा तुझसे
चाहता हूं।

प्रभु ! अपनी विश्व-सभा में मुझे गीत गाने का सम्मान दे।

आह्वान

[दाओ हे आमार भय भेंगे दाओ]

मेरा भय नष्ट करो प्रभु ! नष्ट करो !
मुझसे मुख मत मोड़ो !

तू पास ही था, मैं पहचान न सका—
मैं कहीं और ही देख रहा था, न जानें कहां !

तू मेरे अन्तःकरण में विहार कर !
मेरे हृदय में हंसी का प्रकाश कर !

बोल, मुझसे कुछ भी बोल, मेरे शरीर का स्पर्श कर—
अपने हाथ बढ़ाकर मुझे उभार ले !

प्रभु ! मेरे सब ज्ञान भ्रामक हैं,
मेरा हास्य-रुदन सब भ्रामक है,
मेरे सामने आ मेरा भ्रम दूर करो, मेरा भय नष्ट करो !

आहट

[आमार मिलन लागि तुमि]

मुझसे मिलने के लिए; न जाने किस अनादि काल से तू चला
हुआ है।
तेरे सूर्य-चन्द्र तुझे मेरी आंखों की ओट नहीं कर सके!
अगणित प्रभात और सन्ध्या की वेला मैंने तेरे पैरों की
आहट सुनी है।
तेरे दूत मेरे हृदय में चुपचाप निमंत्रण दे जाते हैं।

हे पथिक! न जाने क्यों आज मेरे प्राणों में अपार हर्ष भर गया है!
एक अवर्णनीय आनन्द की कंपकंपी मेरे हृदय में व्याप्त हो गई है,
आज क्या जाने की वेला आ गई?
आज क्या मेरे सब कर्तव्य पूरे हो गए?
प्रभु! तेरे स्पर्श से वायु में जो मृदु-मधु सुवास भर गया है,
वह मुझे जता रहा है कि तू मेरे बहुत निकट आ चुका है।

प्रचण्ड प्रवाह

[पारबि ना कि जोग दिते]

आनन्द के इस प्रवाह की प्रचण्ड गति के साथ तू अपने छंदों
का स्वर नहीं जोड़ सकेगा।
मृत्यु की वीणा में, दिशाओं में, सूर्य-चन्द्र में जो स्वर-गति है,
उसके साथ तू अपना स्वर नहीं मिला सकेगा।

सबमें अनन्त वेग है, किसीको विश्राम की इच्छा नहीं,
कोई पीछे मुड़कर नहीं देखता, कोई शक्ति उन्हें नहीं रोक
सकती—तू उनका सहभागी होकर कैसे चल सकेगा ?

उसके आनन्दमय पदक्षेप के साथ उन्मत्त ऋतुएं नाचती हुई
आती हैं और चली जाती हैं—
उनके आगमन के साथ पृथ्वी पर रंग, गीत, गन्ध का प्रवाह
उमड़ आता है। उस आनन्द में स्वयं को डुबाने,
अर्पित करने में क्या तू उनका सहभागी हो सकता है ?

अखंड आशा

[हेथा जे गान गाइते आसा आमार]

यहां जो गीत गाने मैं आया था, उन्हें नहीं गा सका।
आज केवल वीणा के तारों का स्वर साधता रहा,
गाने की मन में ही रह गई।
मेरे स्वरों में समता नहीं बंधी, मेरे शब्द लड़खड़ाते रहे।

केवल प्राणों में गीत गाने की व्याकुलता भरी रही।
आज ये फूल खिले नहीं, केवल हवा के संग डोलते रहे!
मैंने उसके दर्शन नहीं किए, उसके बोल नहीं सुने, केवल
उसकी पदध्वनि प्रतिक्षण सुना करता हूं—
यह व्यक्ति मेरे द्वार के सामने से आता और जाता है,
मेरा सारा दिन उसके सत्कार के लिए आसन बिछाने में बीत
गया;

घर में दीया भी न जल सका;
अब उसे कैसे पुकारूं?
उससे मेरी भेंट नहीं हुई;
किन्तु वह आएगा, भेंट होगी, वह अखंड आशा मेरे प्राणों
में बसी है।
मैंने उसके स्वर नहीं सुने, प्रतिक्षण उसकी पदध्वनि सुना
करता हूं।

राखी की डोर

[गाये आमार पुलक लागे]

मेरे अंग-अंग में रोमांच हो आया, आंखों में उन्माद छा गया,
मेरे हृदय में लाल राखी की डोर किसने बांध दी ?

आज आकाश के नीचे जल-थल, फूल-फल में तूने मेरे मन
का सिंचन कैसे कर दिया ?
आज तुझसे मेरा राखी का खेल इतना सुन्दर कैसे बन गया !

फिर भी, मुझे जिसने बुलाया है उससे भेंट होगी, या उसकी
खोज में भटकना पड़ेगा, इसकी कुछ थाह नहीं लगती !

आज मेरा आनन्द न जाने किस बहाने आंखों के जल में
झरने को व्याकुल हो उठा है।
आज विरह ने मधुर रूप धारण करके मुझे विह्वल बना
दिया है !

रक्षा-बंधन

[प्रभु आजि तोमार दक्खिन हात]

प्रभु ! आज मैं तेरे दक्षिण हाथ में राखी बांधने आया हूं,
उसे छिपा न लेना !
तेरे हाथ में राखी बांधकर मैं सबके राखी बांध दूंगा, कोई भी
इस बन्धन से बाहर न जा सकेगा।
आज अपने-पराये का भेद रहा ही नहीं—
आज मैं अपने अन्दर-बाहर सबको एक-सा देख रहा हूं !

तेरे विरह-दुःख में रोता-रोता मैं इतनी देर भटका, किन्तु वह
विरह क्षण-भर में नष्ट हो गया।
अब तेरी ओर दौड़ा आता हूं—
तेरे हाथ में राखी बांधने आता हूं, उस हाथ को छिपा न लेना !

आनन्द-यज्ञ

[जगते आनन्द जग्ये आमार निमंत्रण]

जगत् के आनन्द-समारोह में भाग लेने का मुझे निमंत्रण मिला है। इससे मेरा मानवी जीवन धन्य हो गया है। मेरे नयन अब रूप-सुधा का पान करते हैं और मेरे कान दिव्य स्वर सुनते हैं।

इस उत्सव में मुझे बांसुरी पर गाने का काम तूने सौंपा है, इसलिए मेरे जीवन के सब हंसी-रुदन गीतों के स्वरों में गुंथ गए हैं।

अब, आखिर वह वेला आ गई—
तेरे उत्सव में जाकर तेरी जयध्वनि सुनूं और तेरे चरणों में मौन प्रणाम की भेंट दूं !
जगत् के आनंद-समारोह में भाग लेने का मुझे तेरा निमंत्रण मिला है !

निःस्वर वीणा

[रूपसागरे डुब दियेछि]

रूप-रत्नों से भरे इस सागर में, मैं अरूप, अनमोल मोती को
पाने के लिए गोता लगाता हूं !

बस, अब मैं अपनी जीर्ण नौका को घाट-घाट पर नहीं ले
जाऊंगा।
लहरों पर खेलने-मचलने की वेला समाप्त हो गई।
अब अमरता के अथाह सागर में लीन होना है।

अपने प्राणों की वीणा अब मैं उस अथाह अंधकार-भरी सभा
में ले जाऊंगा, जहां स्वरहीन तारों के गीत अनादिकाल
से गाए जाते हैं।
वहां उसे अनंत के स्वर से मिला लूंगा और जब मेरी वीणा
अपना अन्तिम गीत गाकर निःस्वर हो जाएगी, निःशब्द
हो जाएगी, तब उसे अपने नीरव प्रभु के चरणों में
रख दूंगा।

वसन्त

[आज वसन्त जागृत द्वारे]

आज वसंत के द्वार खुल गए हैं !
तेरे उदास, बुझे जीवन का कोई उपहास न करे—
इसलिए तू अपने हृदय की कलियों को खुलने दे, अपने-पराये
का भेद भूल जा, इस संगीत-स्वर से गूंजते आकाश में
अपनी सुवास की लहरें उठने दे !

आज वन के पत्ते-पत्ते से तीव्र वेदना व्यक्त हो रही है।
व्याकुल वसुन्धरा क्षितिज पर किसीकी राह में सजल पलकें
बिछाए बैठी है।

दक्षिण की वायु भी द्वार-द्वार जाकर किसको खोज रही है ?

प्रेमातुर रजनी भी धरती पर किन चरणों की आहट सुनने को
जाग रही है ?

हे कान्त ! तुझे बुलाने को किसने गंभीर आह्वान किया है ?

सिंहासन

[तब सिंहासनेर आसन हते]

तू वहां अपने ऊंचे सिंहासन पर बैठा था—
मैं यहां बैठा अपने गीत गा रहा था—
तेरे कानों तक उन गीतों की अस्पष्ट-सी ध्वनि पहुंची और तू
नीचे उतरकर मेरे घर के द्वार की सीढ़ियों पर खड़ा
हो गया !

तेरे दरबार में अनगिनत गुणी गायक हैं;
किन्तु मुझ गुणहीन के गीतों ने ही तेरे प्रेम को जगाया है।
विश्व के गीतों में से एक मेरे करुण स्वर ने ही तुझे
स्पर्श किया है !

तू वरमाला हाथ में लेकर नीचे उतर आया, और मेरे निर्जन
घर के द्वार की सीढ़ियों पर खड़ा हो गया !

एक बार

[तुमि एबार आसाय]

हे नाथ ! मेरी इतनी तू विनती स्वीकार कर ; एक बार स्वीकार कर !

मेरे हृदय में रह, अब लौटकर न जा !

जो दिन तेरे वियोग में गया, वह धूलि में मिल गया ! अब तेरे ही प्रकाश में जीवन-कलिका को विकसाने के लिए मैं दिनानुदिन जाग रहा हूं !

किस उन्माद में, किसकी खोज में ; मैं इधर-उधर की राहों पर भटकता रहा ? कौन जाने ?
अब मेरे हृदय पर कान रख और अपनी ही आवाज सुन !

मेरे पास जो पाप-धन या छल-बल तुझे दिखाई दे, उसे आग में जला दे !

जीवन-सरोवर

[जीवन जखन शुकाये जाय]

जब जीवन का सरोवर सूख जाए, हृदय-कमल की पंखुड़ियां
झुलस जाएं, तब तू करुणा के बादलों के साथ उमड़-
घुमड़कर आना !

जब जीवन का सारा माधुर्य कटुता के सूखे मरुस्थल में बदल
जाए, तब तू गीतों की सरस गंगा बनकर आकाश से
उतरना !

जब संसारी कामों का कोलाहल दशों दिशाओं से उठकर
गरज रहा हो और मुझे अपनी ही सीमा में कैद कर ले,
तब हे प्रशांत प्रभु ! मेरे पास शांति और विश्राम-दूत
बनकर आना !

जब मेरा दीन-हीन हृदय अपने में ही सिमटा-सा कोने में
बैठा हो, तब हे उदार प्रभु ! मेरे द्वार खोलकर राजसी
समारोह के साथ मेरे घर में अचानक प्रवेश करना !

जब लालसाएं अपनी प्रचण्ड धूलि और चमकीली वंचनाओं
से विवेक को अन्धा बना दें, तब तू, हे प्रभु ! अपने तेज
और ओजस्वी प्रकाश के साथ आना !

हतभाग्य

[शे जे पाशे एशे बोशेछिलो]

वह पास आकर बैठ गया, तब भी मैं जागा नहीं—
हतभाग्य ! तुझे ऐसी नींद कैसे आ गई ?

जब वह आया था, प्रशांत रात की वेला थी, उसके हाथों में वीणा थी;
मेरे स्वप्न उसकी झंकार के स्वर में बह गए थे !

जागकर मैंने देखा, दक्षिण दिशा का पवन चारों ओर अंधकार में अपना गन्धप्रसार करता हुआ चल रहा था।

मेरी सब रातें जाने क्यों इसी तरह निकल गईं !
जाने क्यों, उसके श्वासों का स्पर्श तो हुआ है लेकिन दर्शन नहीं हुए !

हतभाग्य ! उसके कंठहार का तो वक्ष से स्पर्श हुआ लेकिन आलिंगन न हो सका !

वह आ रहा है

[तोरा शुनिस ना कि]

वह आ रहा है, आ रहा है, आ रहा है !
उसकी चरण-ध्वनि तुमने नहीं सुनी ?

युग-युग, पल-पल, प्रति दिन, प्रति रात—
वह आ रहा है, आ रहा है, आ रहा है !

मन की तरंगों में मैंने उसके कितने ही गीत गाए हैं,
उन सब गीतों के स्वर से यही ध्वनि निकलती है—
वह आ रहा है—आ रहा है—आ रहा है !
वसन्त के चमचमाते दिन, वह वन-मार्ग से आता है,
सावन की अंधेरी रातों में मेघों के गरजते रथ पर बैठकर वह आता है।
जब दुःख पर दुःख आता है ; वह दुःख नहीं उसीके चरण, हृदय को छूते हैं,
जब सुख का भान होता है, उसीके चरणों का स्पर्श मन को पुलकित करता है, उसकी चरण-ध्वनि ही हृदय का स्पन्दन है !

वह आ रहा है; आ रहा है, आ रहा है !

नई तारें

[एकटि एकटि करे तोमार]

सितार की पुरानी तारों को एक-एक करके उतार दे, उनपर
नई तारें जोड़।

दिन का मेला अब बिखर चुका, रात की बैठक शुरू हुई;
पुराने स्वरों को बिठाने की कोशिश न कर, उसके दिन बीत
चुके !

अब सितार पर नई तारें लगा !

आकाश के विशाल तिमिर को आने के लिए अपना द्वार
खुला रख !

सात लोकों की निःस्तब्धता उसके साथ अपने घर में आने दे !

अब तक जो गीत तूने गाए थे उनकी आज परिसमाप्ति हुई,
ये वाद्य तेरे वाद्य हैं, यह बात ही भूल जा।
अपनी सितार पर नई तारें जोड़ !

प्रवास की तिथि

[कबे आमि बाहिर होलेम]

सोचता हूं, यह बात कब हुई ?
तेरे गीत गाता-गाता मैं कब बाहर आया ?—कब आया
पर, यह बात आज की नहीं, आज की नहीं !
आज मैं तुझे पाने आया था,
कब आया था—यह भी भूल गया ।
पर, यह बात आज की नहीं, आज की नहीं !

जैसे कोई कुछ देर बाहर आए,
और किससे मिलना है, यही भूल जाए ;
इसी तरह मेरी जीवन-धारा बाहर आई थी,
पर, यह बात आज कीं नहीं, आज की नहीं !

मैंने तुझे कितने ही नामों से पुकारा, कितने ही चित्रों में तेरी ध्वनि उतारीं, तेरा पता न चला ।
पर, यह बात आज की नहीं, आज की नहीं !

इसी तरह तुझसे मिलने की आशा का आवरण मेरे हृदय पर छा गया !
पर, यह बात आज की नहीं, आज की नहीं !

विराट् रूप

[आमार खेला जखन छिलो]

जब तक मैं-तू खेलते रहे, मैंने तेरा नाम-धाम नहीं पूछा ;
ना तुझसे लाज आती थी, ना ही भय लगता था ;
तेरा-मेरा जीवन आनन्द-उल्लास की तरंगों में बहता चल
रहा था !

प्रभात में तूने मुझे कितनी ही बार पुकारकर जगाया है, और
अपने संग खेलने ले गया है। हंसते-खेलते हम वन-
पर्वतों में घूमे हैं।
उन दिनों तेरे गीतों का अर्थ समझने की मैंने कभी चिन्ता
ही नहीं की। केवल तेरे स्वर में स्वर मिलाकर
मैं भी गुनगुनाया करता था।
और मेरा हृदय विलक्षण आनन्द से पुलकित हो नाच
उठता था।

अब, उस खेल के बाद अचानक ही यह क्या देख रहा हूं—
आकाश स्तब्ध है, रवि-चन्द्र निःशब्द हैं ; सम्पूर्ण विश्व, तारों-
भरा सारा द्युलोक तेरे चरणों में झुका हुआ है !

नीरव स्वर

[ओ गो मौन ! ना जदि कओ]

प्रभु ! तेरा अनन्त मौन भी मुझे स्वीकार है—
तेरी नीरवता को ही मैं भर लूंगा !

तेरी प्रतीक्षा में झुकी हुई यह नीरव रात्रि तारों का दीपक
जलाकर अनिमेष नेत्रों से तेरी राह देखा करती है।
मैं भी वही स्तब्ध प्रतीक्षा अपने हृदय में भर लूंगा !

जब प्रभात की वेला आएगी, अंधकार दूर होगा—
तेरी वीणा के सुनहरे तारों से प्रस्फुटित स्वर-धारा आकाश
को खंड-खंड करके पृथ्वी पर छा जाएगी—
उस समय मेरे मन-पंछी का घोंसला भी तेरे गीत, तेरे स्वरों से
मुखरित हो जाएगा न ?
और तेरी ही स्वर-कलिका मेरे उद्यान की वन-लताओं पर
फूल बनकर खिल पड़ेगी न ?

प्राणों में भय

[एइ ज्योत्स्ना राते]

आज चांदनी रातों में मेरे प्राण फिर चंचल हो उठे हैं—
सोचता हूं, तेरे पास बैठने का स्थान मिलेगा क्या ?
क्या तेरा सुन्दर चेहरा देख सकूंगा और क्या मेरे उत्सुक नयन
तेरे नयनों को निर्निमेष देख सकेंगे ?
सोचता हूं, मेरे गीत-भरे आंसू क्या तेरे चरणों को चिरकाल
स्पर्श करने की आज्ञा पा सकेंगे ?

इस भय से कि कहीं तू स्वयं दिए दान को वापस न ले ले ;
मैं ज़मीन में खन्दक खोदकर अपना चेहरा छिपा लूंगा।

तूने मेरे हाथ पर हाथ धरे हैं ; मुझे भय है, कहीं तूने अब
मुझे पास बुलाकर खड़े होने को कहा तो मेरे प्राणों में
भयंकर दारिद्रय छा जाएगा।
सोचता हूं, कहीं तू अपने दान को वापस न ले ले !

जल-विहार

[कथा छिलो एक तरीते]

हम दोनों के बीच गुप्त मंत्रणा हुई थी कि एक नौका पर केवल
तू और मैं बैठकर स्वच्छन्द जल-विहार करेंगे;
हमारी तीर्थयात्रा किस देश और किस लक्ष्य के लिए होगी,
इसका भेद विश्व-भर में किसीको ज्ञात नहीं होगा।

उस तटहीन सागर में बहते हुए मैं तेरे श्रवणोत्सुक कानों में
गीत कहूंगा। वह गीत सागर की उत्ताल तरंगों के
समान फूट पड़ेगा और शब्दों के बन्धन से मुक्त होकर
केवल स्वर-लहरी बन जाएगा!
क्या अभी वह वेला नहीं आई? अब भी क्या कुछ कर्तव्य-
कर्म शेष हैं?

देखो! संध्या समुद्र के तट पर उतर आई है और
धुंधले प्रकाश में समुद्र-विहारी पक्षी पंख फड़फड़ाते
हुए अपने घोंसलों में लौट रहे हैं।

कौन जाने यह लंगर की जंजीर कब उठेगी और अस्त होते
सूर्य की अन्तिम किरणों के समान हमारी नाव भी रात
में स्वतन्त्र जल-विहार को कब प्रस्थान करेगी?

विश्व-यात्रा

[आमार एकला घरेर आडाल भेङ्गे]

अपने सुनसान घर की दीवार लांघकर, प्राणों के रथ पर बैठ,
कभी विशाल विश्व की यात्रा के लिए मैं बाहर जा
सकूंगा ?

अतिशय मोहवश सबका काम करते हुए मैं दुनिया की भूल-
भुलैयों में फंस गया हूं;
आशा-आकांक्षा से भरे सुख-दुःखमय सागर में तैरता हुआ
मैं सागर की तरंगों को अपनी छाती पर झेल
लेता हूं !
किन्तु फिर भयंकर तूफानों के आघातों में जर्जर होकर मैं तेरी
गोद में विश्राम लेने दौड़ आता हूं !
उस समय विश्व के अपार कोलाहल में केवल तेरा स्वर ही
कानों तक पहुंचता है।

सोचता हूं—प्राणों के रथ पर बैठ कभी विश्व-यात्रा के लिए
मैं अपने एकांत घर की दीवार लांघकर बाहर जा
सकूंगा ?

५

जल-धारा

[आमारे जदि जागाले आजि नाथि]

नाथ, तू अब मेरे घर आया है, कृपा कर लौट न जाना !

घनी वन-वीथियों में सावन के मेघ बरस रहे हैं और रात की पलकें बादलों के भार से झुककर बंद हो गई हैं ; कृपा कर अब लौट न जाना !
बिजली की गड़गड़ाहट से नींद उचट गई है। अब वर्षा की जल-धारा के स्वर में स्वर मिलाकर गीत गाने की इच्छा हो रही है।
मेरे आंसुओं के कण आकाश के अंधकार में घूम-घूमकर बड़ी उत्सुकता से कुछ अनुसन्धान कर रहे हैं !

हे नाथ ! मुझपर कृपा कर ! लौटकर न जा, लौटकर न जा !

पुष्प की प्रार्थना

[छिन्नक रे लओो हे मोरे]

जल्दी करो प्रभु ! इसे तोड़ लो, विलंब न करो !
इतने में कहीं मैं धूल में न गिर पड़ूं, यही भय है !

इस फूल को तेरी माला में स्थान मिले न मिले, कौन जाने !
फिर भी; अपने आघात-स्पर्श से ही इसे भाग्यवान बना !

तोड़, तोड़, अब विलंब न कर !
दिन पूरा हो जाएगा, अंधेरा छा जाएगा,
तेरी पूजा का मुहूर्त न टल जाए; यही भय है !

जो थोड़ा-बहुत रंग इस फूल पर है, और जिस थोड़ी-सी
सुवास-सुधा से इसका हृदय भरा है, जब तक तेरी सेवा
का मुहूर्त शेष है तब तक इसका उपभोग कर ले !

तोड़ ले, तोड़ ले, अब विलंब न कर !

पुकार

[चाइ गो आमि तोमारे चाइ]

मुझे तेरी ही चाह है, तेरी ही चाह है, यही शब्द निरन्तर मेरा
अन्तःकरण पुकार-पुकारकर कह रहा है।

जो इतर वासनाएं मेरे मन को रात-दिन भटकाती रहती हैं,
वे सर्वथा मिथ्या हैं, निःसार हैं और निष्प्रयोजन हैं।
मुझे तो तेरी ही चाह है; प्रभु ! तेरी ही चाह है !

जैसे अंधेरी रात के अंतस्तल में प्रकाश की प्रार्थना छिपी
रहती है,
उसी तरह, मेरी घटाटोप वासनाओं में भी मुझे तेरी ही चाह
रहती है। अपने अन्तर की चेतना में भी मैं निरन्तर यह
सुनता हूं, "मुझे तेरी चाह है—तेरी ही चाह है !"

जैसे बादल पूरी शक्ति से शान्ति का आघात करते हुए भी
अपने लक्ष्य की प्राप्ति शान्ति में ही समझते हैं;
वैसे ही मेरा विद्रोह तेरे प्रेम पर आघात करता है और पुकार
रहा है—"मुझे तेरी चाह है !"

निष्ठुर स्वर

[आरो आघात सइबे आमार]

मेरी जीवन-वीणा की तारें और भी आघात सहन कर
सकती हैं !

बजा, उसे और भी ऊंचे स्वरों की झंकार में बजा !
जो स्वर तूने मेरे जीवन में बजाने शुरू किए हैं, उनका अंतिम
अवरोह अभी बजाना शेष है !
इसलिए निष्ठुर मूर्च्छनाओं में उस अंतिम स्वर को हे गायक !
अब मूर्तिमन्त कर दे !

केवल करुण कोमल रागिनियों में ही मेरा अनुराग नहीं है !
मृदुल स्वरों के खेल में मेरा जीवन व्यर्थ ही नष्ट हो रहा है !
अपनी अग्नि को अब प्रचण्ड शिखाओं में प्रज्वलित कर !
अपने पवन को प्रबल आंधियों में बहने दे !
सारे आकाश को विक्षुब्ध होने दे !

मेरी जीवन-वीणा की तारों पर अपना अन्तिम राग निष्ठुर से
निष्ठुर स्वरों में बजने दे !
ये तारें अभी और भी आघात सहन कर सकती हैं !

देवता का भय

[देवता जेने दूरे दई दांडाये]

तुझे देवता जानकर मैं दूर खड़ा रहा हूं—
अपना-सा ही समझकर पास नहीं आता।

तुझे पिता जानकर तेरे चरणों पर झुकता हूं—
मित्र के समान तेरा हाथ नहीं पकड़ता।

प्रेमवश स्वतः मेरा बनकर जिस मार्ग से तू नीचे उतरता है,
उस पथ पर तुझे मन का मीत मान तेरे संग चलने का
साहस नहीं होता !
प्रभु ! तू मेरे सहोदर बन्धु-बांधवों के समान ही बन्धु है, फिर
भी तेरे निकट नहीं जा पाता !
मैं अपना संपूर्ण धन उन बन्धु-बांधवों में बांट देता हूं और
तेरा ही सहभागी बनने को तेरे पास खड़ा हो जाता हूं।
मैं सुख-दुःख के सब क्षणों में भी कभी इतर जनों के संग नहीं
रहता, तेरे ही संग खड़ा रहता हूं।
अपने पथ का अंत न पाकर, जब मैं थक जाता हूं, तो भी मैं
जीवन का त्याग करने की इच्छा से प्राण-सागर में गोता
नहीं लगाता !

तुझे देवता जानकर मैं दूर ही खड़ा रहता हूं; तेरे पास नहीं
जा पाता।

आषाढ के मेघ

[आबार एसे छे आषाढ]

पुनः आकाश में आषाढ के बादल आ गए—
हवा में बरसात की भीनी-भीनी गन्ध रम गई—
मेरा पुरातन हृदय आज नवीन बादलों के कर-स्पर्श से रोमांचित हो झंकार करने लगा !

पुनः आकाश में आषाढ के बादल आ गए—
विशाल खेतों की हरी-हरी कोंपलों पर बादलों की सांवली छाया पड़ रही है !

'आ गए', 'आ गए', यही ध्वनि हृदय में गूंज रही है—
'आ गए', 'आ गए', 'आंखों में आ गए', 'हृदय में छा गए' :

यही ध्वनि चारों ओर गूंज रही है—
पुनः आकाश में आषाढ के बादल आ गए ।

दिव्य रस

[हे मोर देवता, भरिया ए देहप्राण]

हे मेरे देवता !
मेरा जीवन-पात्र अमृत से लबालब भरा है ;
तू कौन-से दिव्य रस का पान करना चाहता है ?

हे मेरे कवि ! क्या तू स्वनिर्मित विश्व-प्रतिमा को ही मेरे नेत्रों में देखना चाहता है ?
और, मेरे कर्ण-कुहरों के समीप चुपचाप ठहर, अपने बनाए गीतों का दिव्य स्वर स्वयं सुनना ही प्रिय है क्या ?
तेरी सृष्टि मेरे मन में सुन्दर शब्दों का जाल बुन रही है ;
तेरा आनन्दमय प्रेम उन शब्दों में गीत भर रहा है ; इसी योग से मेरे गीत प्रस्फुटित होते हैं !

प्रेमवश तू अपना सर्वस्व मेरे हृदय को अर्पित कर देता है,
और तब अपने समस्त माधुर्य को मेरे अन्तर में देखना चाहता है ?

हे मेरे देवता ! तू कौन-से दिव्य रस का पान करना चाहता है ?

प्रतिच्छाया

[एकला आमि बाहिर होलेम]

प्रियतम !
तुझसे मिलने को मैं अकेला बाहर आया था।

जाने वह कौन है; जो सुनसान अंधेरे में मेरे साथ चलने लगा !
उससे दूर हटने का मैंने बहुत प्रयत्न किया, टेढ़े-तिरछे रास्ते पर भी चला ;
कई बार ऐसा प्रतीत हुआ कि वह नहीं रहा, किन्तु फिर उसकी पदध्वनि सुनाई देने लगी।

वह पृथ्वी पर धूल उड़ाता जाता है, विलक्षण चंचलता है उसमें !
मेरे हर शब्द में वह अपना स्वर मिला देता है ;
वह मेरी प्रतिच्छाया तो नहीं, प्रभु !
वह तो निपट निर्लज्ज है ; उसके साथ तेरे द्वार तक आते मुझे लाज आती है।

प्रियतम ! तुझसे मिलने को मैं अकेला ही बाहर आया था।

निर्मल पत्र-पुष्प

[आर आमाय आमि निजेर शिरे]

प्रभु ! आज से मैं अपने ही कंधों पर अपना भार नहीं उठाऊंगा !
आज से मैं अपने ही द्वार पर भिक्षा मांगने नहीं आऊंगा !
इस भार को तेरे चरणों के समीप रख दूंगा, और निश्चिन्त होकर विचरण करूंगा, चिन्ताक्रांत हो पीछे मुड़कर नहीं देखूंगा।

मैं अपने ही कंधों पर अपना भार उठाए नहीं फिरूंगा !
मेरी वासनाओं का पवन जिस-जिस दीपक को छूता है, उसका प्रकाश क्षण-भर में मन्द हो जाता है।
इनमें मलिनता है—इन मैले हाथों का नैवेद्य स्वीकार न करो !
मेरी वासनाओं में मलिनता है।
निर्मल प्रेम से प्रेरित पत्र-पुष्प को ही स्वीकार करो, प्रभु !

नतमस्तक

[जथाय थाके शबार अधम]

नाथ ! जहां सबसे अधम, दीनों के दीन जन रहते हैं; वहां
सबसे पिछड़े और सबसे तिरस्कृत लोगों के मध्य तेरे
चरण विराजमान हैं।
जब मैं तुझे प्रणाम करता हूं, तब मेरा विनत मस्तक नमन
की सीमा तक पहुंचकर भी तेरी चरण-पीठिका तक नहीं
पहुंच पाता।
क्योंकि, तेरे चरण सबसे निम्न और दीन जनों के मध्य स्थित
हैं। मेरा मस्तक झुककर भी तेरे चरणों की सतह तक
नहीं पहुंचता !

जहां तू दीन जनों के दरिद्रवेश में सर्वदलित, सर्वतिरस्कृत,
अति दीनजनों के मध्य संचार करता है, वहां मेरा
अहंकार नहीं पहुंचता।
धन-मान-सम्पन्नों के मध्य मैं तुझे पाने की आशा करता हूं ;
किन्तु, तेरा साहचर्य तो उनसे है जिसका कोई और
सहचर नहीं !
उन सर्वदलित, तिरस्कृत और दीनों के दीन जनों तक मेरा
हृदय नहीं पहुंच पाता !

हृदय-कोष

[आछो आमार हृदय आयो भरे]

तू मेरे हृदय में पूर्ण रूप में समा गया है; इसलिए अब जो
जी में आए वह कर।
जब तूने मेरे अन्दर के खज़ाने पर अधिकार किया है, तो
बाहर का भी सब कुछ अपने हाथ में ले ले।
इस तरह मेरी सब तृष्णाओं का अन्त होगा, तभी तू
मेरे प्राणों को अपनी परितृप्ति से भरेगा।
इसके बाद कोई चिन्ता नहीं, संसार में टेढ़े-मेढ़े रास्तों पर
अंगार भी बरसें तो बरसने दे।

विविध रूपों में इस तरह जो तू खेल खेलता है, वह मुझे
रुचिकर है।
एक की आंखों में तू आंसू भरता है तो दूसरे की आंखों में
हास्य !
कई बार ऐसा लगता है कि मेरा सब कुछ लुट गया, तभी
तुझसे भेंट होती है और मुझे लगता है, जो लुटा था
उससे भी अधिक मिल गया।
एक हाथ से तू मुझे सिर से उतारकर नीचे पटक देता है,
पर, दूसरे हाथ से उठाकर छाती से लगा लेता है!
तू मेरे हृदय-कोष में पूर्ण रूप से समा गया है, इसलिए अब जो
जी में आए वह कर!

संचित धन

[मरण जेदिन दिनेर शेषे]

दिन ढलते समय मृत्यु जब तेरे द्वार पर आएगी, तू उसे कौन-सी भेंट देगा ?
मेरे प्राणों का सागर रत्नों से भरपूर है, वे सब रत्न उसके आगे रख दूंगा ?
जिस दिन मृत्यु के दूत मेरे द्वार पर आएंगे, उस दिन उन्हें खाली हाथ वापस नहीं भेजूंगा।

शरत, वसंत, संध्या, प्रभात, दिवस, रात्रि-रूपी वाटिका के पुष्पों से संचित, रसों का भंडार मेरे जीवन-पात्र में भरा है ;
सुख-दु:ख, छाया-प्रकाश के विविध पत्र-पुष्पों से मेरा अन्तः-करण सज्जित है ;
जितना संचित धन मेरे पास है; जो कुछ भी मैंने इतने दिनों संग्रह किया है—
वह सब संचित धन सजाकर अपनी जीवन-यात्रा के अन्तिम दिन, जब मृत्यु मेरे द्वार पर आएगी, तो मैं उसके आगे रख दूंगा।

हे मेरे मरण !

[ओगो आमार एइ जीवनेर शेष परिपूर्णता]

हे मेरे जीवन की अन्तिम साध !
हे मेरे मरण ! आ और मुझसे बात कर !
मैं जन्म-भर तेरे लिए जागता रहा, जन्म-भर तेरे लिए ही सुख-
दुःख का भार अपने कन्धों पर उठाकर घूमता रहा हूं।
हे मेरे मरण ! आ और मुझसे बात कर !
जो कुछ मैं हूं, जो कुछ मेरा है;
अपने जीवन में मैंने जो कुछ किया है;
मेरा प्रेम; मेरी आशा—सब रहस्यपूर्ण पथ से तेरी दिशा में ही
बढ़ रहे हैं !
तेरी अन्तिम एक दृष्टि पर मेरा सम्पूर्ण जीवन अर्पित हो
जाएगा।

फूलों का चयन हो चुका ;
वरमाला बन चुकी ;
तू कब वर की सुन्दर वेश-भूषा पहनकर शांत मुस्कान के साथ
आएगा ?
उस दिन के बाद नववधू बनकर मैं अपना निवास छोड़ दूंगा
और रात्रि के एकान्त में पति-पत्नी की भेंट होगी !
तब मैं-तू का भेद नहीं रहेगा !
हे मेरे मरण ! आ और मुझसे बात कर !

देवालय

[भजन पूजन साधन आराधना]

पुजारी! भजन, पूजन, साधन, आराधना, इन सबको किनारे रख दे।

द्वार बन्द करके देवालय के कोने में क्यों बैठा है ?
अपने मन के अंधकार में छिपा बैठा, तू कौन-सी पूजा में मग्न है ?
आंखें खोलकर ज़रा देख तो सही, तेरा देवता देवालय में नहीं है !

जहां कठोर ज़मीन को नरम करके किसान खेती कर रहा है;
जहां मज़दूर पत्थर तोड़कर रास्ता तैयार कर रहे हैं;
तेरा देवता वहीं चला गया है !

वे धूप-बरसात में सदा एक समान तपते-झुलसते हैं।
उनके दोनों हाथ मिट्टी में सने हैं;
उनके पास जाना है तो सुन्दर परिधान त्यागकर मिट्टी-भरे रास्तों से जा !
तेरा देवता देवालय में नहीं है, भजन, पूजन, साधन को किनारे रख दे !

सीमा में असीम

[सीमार माझे, असीम तुमि]

हे असीम ! सीमा में भी तेरा ही स्वर ध्वनित हो रहा है !
मेरे अंत:करण में भी तेरा ही मोहक प्रकाश है !
हे रूपरहित ! कितने ही रंगों, गन्धों, गीतों, छन्दों आदि
तेरे रूपों में, तेरी लीला का विस्तार मेरे हृदय में
भरा है।
इसीलिए तो मेरे अन्तर में तेरी शोभा इतनी आकर्षक है !

तेरा-मेरा मिलन होगा तो सब अवरोध दूर हो जाएंगे।
विश्व-सागर की तरंगों का ऐसा ज्वार उठेगा कि पृथ्वी हिल
जाएगी !
तेरे प्रकाश में छाया नहीं है—मेरे अन्त:करण में ही उसे
काया मिलती है !
मेरे आंसुओं में ही वह विह्वल और सुन्दर होता है ;
मेरे अन्तर में इसीलिए तेरी शोभा इतनी आकर्षक है !

नवीन पथरेखा

[भेबेछिनु मने जा हबार तारि शेषे]

एक दिन मेरे मन में विचार आया—
जो कुछ होना था सब हो चुका, मेरी यात्रा का अंतिम पड़ाव
आ गया।
मुझे प्रतीत हुआ, अब आगे मार्ग नहीं है, मैं अपनी मंज़िल
पर पहुंच चुका।
अब प्रयास का कोई प्रयोजन ही नहीं रहा, पाथेय भी समाप्त
हो गया।
समय आ गया है कि अब थके-हारे जीवन को विश्रान्ति
मिले।
इन फटे-पुराने चिथड़ों के साथ-साथ मैं आगे जा भी कैसे
सकता हूं ?

किन्तु आज देखता हूं—
तेरी लीला का कोई अन्त नहीं, नवीनता की कोई सीमा नहीं!
अपने नये मनोरथ पूरे करने के लिए तूने मुझे फिर नया जीवन
दे दिया!
मेरे गीत के पुराने स्वर जब अपना माधुर्य खो बैठे तो वही
नये गानों के स्वर में हृदय के स्रोत से फूट उठे!
और, जब पुरानी पथरेखा लुप्त हो गई तो नये-नये मार्गों की
दृश्यावलि आंखों के आगे नाचने लगी

अलंकार-हीन

[आमार ए गान छेड़ेशे तार]

स्वामी ! मेरे गीत ने अपने सब अलंकार उतार दिए हैं।
तेरे समक्ष उसने वस्त्र-परिधान का अहंकार भी नहीं रखा।
अलंकार-आभूषण तेरे-मेरे मध्य पूर्ण मिलन में रुकावट
डालते हैं।
उनकी चंचल झनझनाहट में तेरे गीतों का स्वर लुप्त हो
जाता है।

तेरे सामने, अपने गायक होने का मेरा अभिमान शोभा नहीं
देता।

हे महाकवि ! मैं तेरी शरण में आने का प्रार्थी हूं।
मेरे जीवन को बांसुरी के समान सरल कर दे !
और; उस बांसुरी के सभी छिद्रों में अपने गीतों का स्वर
भर दे !

राजसी वेष

[राजार मतो बेशे तुमि]

राजसी ठाट-बाट के परिधान और हीरे-मोतियों के हार पहनाकर, बालकों के क्रीड़ा-विनोद का आनन्द क्यों छीनता है ?

वस्त्र और आभूषणों का भार उन्हें खेलने से रोकता है !

हमारे वस्त्र-भूषण जन-संपर्क में फट न जाएं ; धूलि-धूसर न हो जाएं, इस डर से वे अपने साथियों से दूर रहते हैं।

राजसी साज-बाज के कपड़ों से जिन बालकों को तुम सजाते हो, और जिन्हें मोती-हीरकों की मालाओं से मंडित करते हो, उन्हें खुलकर खेलने में अनेक तरह के डर सताते हैं !

माता ! बालकों को राजा की तरह सजाने या हार पहनाने से क्या होगा ?

द्वार खोल दे ; बालकों को बाहर आकर, रास्ते की धूल-वर्षा, धूलि में लोटने दे !

उसे जनता के समूह में मिलकर नाना प्रकार के खेल खेलने दे !

चारों दिशाओं से शतशः मधुर संगीत-स्वरों की गूंज आ रही है—उस स्वर में स्वर मिलाकर बालक को गाने दे !

अन्तिम प्रसाद

[गान दिए जे तोमाय खुंजि]

जन्म-भर अपने गीतों से मैं अपने अन्तःकरण व जगत के दिशा-दिशांतर में तेरी खोज करता हूं !

मेरे गीत मुझे घर-घर, द्वार-द्वार ले जाते रहे। इन गीतों द्वारा मैंने कितनी ही बार तेरा संदेश दिया, कितने ही गुप्त रहस्यों का उद्घाटन किया; हृदय-गगन के कितने ही तारों से मेरा परिचय हुआ !

नानाविधि सुख-दुःख-भरे प्रदेशों में मेरे गीतों ने भ्रमण किया और अन्त में सन्ध्याकाल की वेला में अपना प्रसाद पाने के लिए गीत मेरे समीप आए हैं !

नीरव गीत

[जॅनो शेष गाने मोर सब रागिनी पुरे]

मेरे अन्तिम गीत में सारी रागिनियां पूर्ण होती हैं !
उस गीत के स्वर में मेरे हृदय का सम्पूर्ण आनन्द व्यक्त है।
जिस आनन्द से पृथ्वी वृक्षों की डालियों के संग झूम
उठती है;

जिस आनन्द से जीवन और मरण, दोनों सहोदर भाई,
परस्पर ओतप्रोत हो. जगत् की रंगशाला में नृत्य कर
रहे हैं;
वही आनन्द, इस रागिनी के स्वरों से व्यक्त होता है।

जो आनन्द बादलों और आंधियों के संग रहता है, और
अलसाए उदास जीवनों में हास्य की विद्युत् भर
देता है;

जो आनन्द दुःखों के रक्तिम कमल-पत्रों पर आंसू के समान
मौन भाव से विराजता है;
और, जो आनन्द अपना सर्वस्व धूलि में मिलाकर निःशब्द
और निर्लेप रहता है;
वही आनन्द इस रागिनी के स्वरों से व्यक्त होता है !

अल्प भिक्षा

[तोमाय आमार प्रभु कोरे राखि]

प्रभु ! मैं तुमसे इतनी ही भिक्षा मांगता हूं—
तू मुझमें बस इतना ही अहंभाव शेष रहने दे कि मैं तुझमें
पूर्णभाव से एकरूप हो सकूं !
मुझमें बस इतनी ही स्वतन्त्र चेतना रहने दे कि मैं तुझे चारों
ओर अनुभव कर सकूं; और रात-दिन प्रत्येक क्षण
अपना प्रेम तेरे अर्पण कर सकूं !
मुझमें बस इतना ही सा आवरण रहने दे कि मेरा 'अहं'
तुझे न ढांप सके; तेरी लीला ही मेरे सम्पूर्ण जीवन
में संचारित हो !

प्रभु ! मुझे इतने ही बंधन में बांधना कि मैं तेरे ही प्रेम-पाश
में बंधा रहूं,—मेरे जीवन में तेरा ही प्रयोजन सिद्ध
होता रहे !

प्रभु ! मैं तुमसे इतनी ही भिक्षा चाहता हूं !

नाम का बन्दीगृह

[आमार नामटा दिए ढेके राखि जारे]

अपने नाम के साथ जिसे मैंने बांधा है, वह इस नाम की
कड़ियों में बंधा बंदीगृह में रो रहा है!

रात-दिन नाम की दीवार को ही बांधते हुए मैं शेष सब काम
भूल गया हूं।
नाम की यह दीवार जैसे-जैसे आकाश में ऊंची बंधती जाती
है, वैसे-वैसे इस दीवार की छाया का घना अंधकार मेरे
अन्तःकरण को घेरता जा रहा है।
मिट्टी पर मिट्टी रखते हुए मैं नाम की दीवार को ऊंची करता
जा रहा हूं;

उस दीवार में कोई छिद्र न रह जाए, प्रकाश आने का कोई
मार्ग न रह जाए, इसीकी मुझे चिन्ता है।

इस दीवार ने तो सत्य-स्वरूप को ही छिपा लिया है।

मोह-शृङ्खला

[जडाये आछे बाधा]

मेरी मोह की जंजीर बड़ी दृढ़ है !
तू उसे तोड़ दे, यही मेरी कामना है; किन्तु उसे तोड़ते हुए
मेरा मन दुःखी हो जाता है ।
मुक्ति मांगने के लिए मैं तेरे पास जाता हूं, किन्तु मुक्ति की
आशा से भयभीत हो जाता हूं !
मेरे जीवन में तू ही मेरी सर्वश्रेष्ठ निधि है। तुझ-सा अनमोल
धन कोई दूसरा नहीं ;
यह मैं जानता हूं; किन्तु मेरे घर में जो टूटे-फूटे बरतन हैं उन्हें
भी फेंकने को दिल नहीं मानता ।
जो आवरण मेरे शरीर पर पड़ा है, हृदय पर पड़ा है, वह धूलि-
धूसर है और मृत्यु के शाप से ग्रस्त है ; मेरा मन उसे
धिक्कारता है तो भी उससे मुझे लगाव है।
मेरे ऋणों का अन्त नहीं, मेरे खाते में अनेक जनों की रकमें
जमा हैं, मेरे जीवन की विफलताएं बड़ी हैं, मेरी लज्जा
की सीमा नहीं,
फिर भी जब कल्याण की भिक्षा मांगने तेरे सामने आता हूं
तो मन ही मन इस डर से कांपता हूं कहीं मेरी भिक्षा
स्वीकार न हो जाए, कहीं मेरे शरीर व हृदय के मैले
आच्छादन को तू उतार न ले, मेरी बन्धन-शृंखला
को तू तोड़ न दे !

सीप का मोती

[तोमार दया जदि चाहिते नाम्रो जानि]

'मैं तेरी दया का याचक हूं,' इतना भी न जानूं, तो भी नाथ!
अपने चरणों के पास रख मुझे दया से ढक देना।

मैं जब निर्माण करता हूं तो तुझे भूल बैठता हूं। उस निर्माण
के फल-फूल में ही मग्न हो जाता हूं और उससे प्राप्त
सुख की आराधना में ही डूब जाता हूं।
इस स्वनिर्मित मिट्टी के क्रीड़ागृह में ही खेलता जान मुझसे
विमुख न हो जाना; मुझे तुच्छ समझ भूल न जाना;
बल्कि अपनी तीव्र प्रेरणा से मुझे जगा देना।

इस द्वन्द्व के बीच ही सत्य है, जैसे सीप की दो तहों में मोती
रहता है। तेरे सिवा कौन है जो उसे भेदकर सत्य को
प्रस्फुटित कर सके?
मृत्यु का भेदन करके ही अमृत की प्राप्ति होती है।

मेरे दैन्य की अगाध शून्यता को भरने आ!
पतन की वेदना ही चेतना को जाग्रत् करती है!
द्वन्द्वों के इस परस्पर-विरोधी कोलाहल में तेरी गम्भीर वाणी
मुझे स्पष्ट सुनाई दे रही है!

एक ही नमस्कार

[एकटि नमस्कारे प्रभू]

हे प्रभु ! ऐसा वर दे कि एक ही प्रणाम में मेरा सारा देह तेरे
विशाल चरणों का स्पर्श कर ले !

अनझरे जल-भार से झुकी सावन की मेघमाला के समान
मेरा मन एक ही प्रणाम द्वारा तेरे मन्दिर-द्वार पर
समर्पित हो जाए !

मेरे सब गीत अपने विविध स्वरों के तरल अलाप को एक ही
प्रवाह में एकत्र कर लें ;

और एक ही प्रणाम में तेरे नीरव सागर में विलीन हो जाएं ;
मानसरोवर की ओर जानेवाले हंस जिस तरह दिन-रात
एक ही उड़ान में उड़ते जाते हैं ; उसी तरह महामृत्यु
के पथ पर मेरे प्राण एक ही नमस्कार में उड़ चलें !

कुमारिका

[जीबने जा चिरदिन]

प्रियतम ! अपने जीवन के अन्तिम गीत में, मैं तेरे चरणों में
उसे अन्तिम भेंट के रूप में अर्पित करूंगा—
जो मेरे जीवन में सतत आभास-रूप रही है ;
जिसने प्रभात के प्रकाश में भी अपना घूंघट नहीं खोला,
शब्दों ने जिसे कभी पूरी तरह अपने आलिंगन में नहीं लपेटा,
गीतों ने जिसे कभी अपने स्वरों से पूरी तरह नहीं बांधा,

जिसका मोहक सौन्दर्य नये-नये रूप धारण करता है—
प्रियतम ! उसे अपने जीवन की अन्तिम भेंट के रूप में अर्पित
करूंगा !
देश-देशान्तर भ्रमण करते हुए मैंने उसे अपने अन्तराल में
छिपाकर रखा है ;
मेरे जीवन की समस्त गतिविधि उसी केन्द्र की परिक्रमा करती
रही है ;
मेरे सम्पूर्ण विचारों, कार्यों, मेरे स्वप्नों में वही राज्य करती
रही है ; फिर भी वह एकाकी अछूती रही है !
दिवसानुदिवस कितने ही लोग उसके लिए द्वार तक आए,
किन्तु सभी बाहर के द्वार से ही निराश वापस लौट
गए !

किसी भी अन्य जन के सामने वह निरावृत नहीं हुई; किसीसे
उसका परिचय नहीं हुआ !

केवल तेरा परिचय पाने की आशा से वह मेरे हृदय के अन्त-
राल में बैठी है !

प्रियतम ! उसे अपने जीवन के अन्तिम गीत में अन्तिम भेंट
के रूप में तुझे अर्पित करूंगा !

प्रेम का दास

[प्रेमेर हाते धरा देबो]

प्रेम के हाथों में अर्पित होने को बैठा हूं !
इसीलिए बहुत विलंब हो गया है, और मुझसे अनेक अपराध
हो गए हैं !

वे अपने विधि-विधानों की डोर में मुझे बांधने आते हैं,
लेकिन मैं सदा बच निकलता हूं।
इस अपराध की सज़ा भुगतनी होगी तो मैं खुशी से भोगूंगा,
क़ारण, मैं प्रेम के हाथों बिककर यहां बैठा हूं।
लोग मेरी निन्दा करते हैं, मैं निन्दा के भार को शिरोधार्य करके
सबके आगे नतमस्तक हो जाता हूं।

दिन ढल गया ;
बेच-खरीद के व्यापारी चले गए।
मुझे बुलाने को आए लोग भी निराश होकर लौट गए।
किन्तु, मैं केवल प्रेम के हाथ बिकने को यहां अकेला
बैठा हूं !

निराला प्रेम

[संसारे ते आार जाहारा]

इस जग की यह रीति है कि जो मुझसे प्रेम करता है वह प्रेम
के पाश में बांध देता है मुझे !
किन्तु तेरा सबसे अधिक प्रेम सबसे निराला है, उसकी नई
ही रीति है ;

तू प्रेम के पाश में मुझे नहीं जकड़ता, सर्वथा मुक्त रखता है !
इतर प्रेमी, इस भय से कि कहीं मैं उन्हें भूल न जाऊं, मेरा
संग नहीं छोड़ते ।

किन्तु एक तू है, जो दिन पर दिन बीत जाते हैं, अपने दर्शन
भी नहीं देता !

तेरा प्रेम सबसे निराला है !
मैं तुझे प्रार्थना में पुकारूं या न पुकारूं, तुझे याद करूं या
न करूं

तेरा प्रेम मेरे प्रेम की सदा प्रतीक्षा करता रहता है !

दिवसान्त

[दिवस जदि सांग होलो]

यदि दिन ढल गया, और पक्षियों का गीत समाप्त हो गया है—
थकी-हारी हवा यदि बहते-बहते अलसा गई है—
तो, मुझे भी काली घटाओं की चादर से ढक दे !
उसी तरह, जिस तरह तूने पृथ्वी को निद्रा की ओढ़नी से ढका
है, अथवा जिस तरह तूने दिवसावसान पर मुरझाते
कमलों की पंखुड़ियों को कोमलता से बन्द किया है !

जिसकी पथ-सामग्री मंज़िल पर पहुंचने से पूर्व ही समाप्त
हो गई है ;
और जिसके मुख पर चिंताओं की रेखाएं अंकित हो गई हैं।
जिसकी वेश-भूषा फटी हुई और धूल में लथ-पथ है,
जिसकी शक्ति का स्रोत सूख गया है ।
उसे; दिन ढलने पर काली घटाओं की चादर से ढक दे !

पुनर्जन्म

न जाने, कब मैंने जीवन की दहलीज को पहले-पहल लांघा
था ?

कौन-सी शक्ति थी जिसने मुझे इस विशाल रहस्यमय देश में
फूट पड़ने की प्रेरणा दी थी ?—जैसे आधी रात को
जंगल में फूल की कलिका फूट पड़े !

प्रातःकाल मैंने जब प्रकाश की किरणें देखीं तो क्षण-भर में
यह जान गया कि उस रहस्य-प्रदेश में मैं निरा अजनबी
नहीं था, और यह भी कि एक अज्ञात, निराकार शक्ति
ने मुझे माता की तरह अपनी गोद में ले लिया था।
मृत्युकाल में भी, वही अज्ञात किन्तु युग-युगों से परिचिता माता
मुझे गोद में लेने आ जाएगी।

जीवन से मुझे प्रेम है, मृत्यु में प्रेम होगा !

माता के दक्षिण पार्श्व के स्तन से वियुक्त हो बच्चा रो उठता है ;
किंतु दूसरे ही क्षण वाम पार्श्व पाकर चुप हो जाता है।
जीवन से छूटकर मृत्यु पाना भी इसी क्षणिक वियोग
और प्राप्ति के समान है।

प्रस्थान

मुझे अब अपनी नाव का लंगर ज़रूर उठाना होगा और
प्रस्थान करना होगा !
हाय ! तट पर खड़े-खड़े ही दिन की अलसाई घड़ियां बीतती
जा रही हैं।

वसन्त के फूल खिलकर विदा हो गए।
मैं मुरझाए फूलों को ही चुनता यहां किसकी प्रतीक्षा में खड़ा हूं?

लहरों में शोर मचा है और तट की अंधेरी कुंज-गलियों में
पीले पत्ते फड़फड़ाकर गिरने शुरू हो गए हैं।

तू किस शून्य पर आंख गड़ाए खड़ा है ! मुझे क्या इस बहते
पवन के कण-कण में मिश्रित उल्लास की अनुभूति
नहीं होती, जिसमें उस पार के गीतों का स्वर मिला
हुआ है !

थकी पलकें

इस थकान-भरी रात में, मुझे सब कुछ तेरे चरणों पर रख निश्चिन्तता और पूर्ण आश्वासन के साथ अपने पास सोने दे!

मेरी क्लान्त और शिथिल शक्तियों को अपनी पूजा के अर्घ्य-संचय में न लगाना—मेरा थका-हारा मन पूजा की उचित तैयारी नहीं कर सकेगा।

तू ही तो दिवस की थकी पलकों को रात की चादर से ढक देता है—जिससे वह जागरण के नये आनन्द से पुलकित हो, नई ज्योति लेकर अपनी यात्रा में नये उत्साह से प्रस्थान करे!

स्वत: बन्दी

"बन्दी ! बता, वह कौन था जिसने तुझे बन्दी बना दिया !"

बन्दी ने उत्तर दिया, "मेरे प्रभु ने—मैंने कल्पना की थी कि मैं धन और बल से सबसे आगे बढ़ जाऊंगा। अपनी ही तिजोरी में मैंने अपने प्रभु के हिस्से का धन भी रख लिया। जब नींद आई तो प्रभु की ही शय्या पर सो भी गया। जब जागा तो देखा कि मैं अपनी तिजोरी में बंद हो गया था !"

"बन्दी ! बता वह कौन है जिसने इस ज़ंजीर को अटूट बना दिया ?"

बन्दी ने उत्तर दिया, "स्वयं मैंने ही इस ज़ंजीर की कड़ियां बड़े यत्न से गढ़ी थीं। मैंने स्वप्न लिए थे कि अपनी अजेय शक्तियों से मैं संसार की सब शक्तियों को इस ज़ंजीर में जकड़ लूंगा और स्वयं स्वाधीन रहकर संसार को अपना दास बना लूंगा। इसीलिए रात-दिन की कठोर मेहनत से, दहकती आग और भारी हथौड़ों के निष्ठुर प्रहारों से, मैंने यह ज़ंजीर तैयार की, लेकिन जब ज़ंजीर की कड़ियां जुड़कर अखण्डित हो गईं तो मैंने देखा कि मैं स्वयं ही इन अखण्ड लौह-कड़ियों का बन्दी बन गया था !"

करुणा-गीत

तेरे मन पर थकान का परदा पड़ा है और तेरी पलकें नींद के भार से बन्द हो रही हैं।

क्या तूने नहीं सुना, फूल बड़े गर्व से कांटों पर राज्य कर रहा है?

जाग, हे जाग्रत् मानव! समय को व्यर्थ ही न जाने दे।

तेरे पथरीले मार्ग के अन्त में, उस अछूते एकान्त प्रदेश में, तेरा साथी अकेला बैठा है; उसे धोखा न दे। जाग, हे जाग्रत् मानव!

आकाश मध्याह्न की गरमी से हांफ रहा है—उसकी चिन्ता न कर! दहकती हुई रेत प्यास की व्याकुलता को बखेर रही है—उसकी चिन्ता न कर!

तेरे हृदय के अंतराल में क्या कोई उल्लास नहीं रहा? तेरे हर पदाघात पर क्या वीणा के तार, करुण गीतों में नहीं फूट पड़ेंगे?

बाल-मेला

असंख्य लोकों के समुद्र-तट पर बालकों का मेला लगा है !
ऊपर अनन्त आकाश का मौन है, और नीचे सागर की क्षुब्ध
तरंगें हैं।
असंख्य लोकों के समुद्र-तट पर बालक कोलाहल और नृत्य
करने आते हैं।
वे बालू के घरौंदे बनाते हैं, खाली कौड़ियों से खेलते हैं। वे
सूखे पत्तों की नाव बनाकर सागर के अथाह जल में
बहा देते हैं।
असंख्य लोकों के सागर-तट पर बालकों का मेला लगा है !
उन्हें तैरना नहीं आता, जाल बिछाना नहीं आता।
मोतियों के मांझी मोतियों के लिए गोता लगाते हैं; सोने-चांदी
के सौदागर अपने जहाज़ों पर धन बटोरने जाते हैं, किन्तु,
बालक सागर के तट पर कौड़ियां जमा करते हैं और
बिखेर देते हैं ! न उन्हें छिपे खज़ानों की चाह है, न
ही उन्हें धन बटोरने के लिए जाल बिछाना आता है।
सागर की तरंगें अट्टहास करती हुई उछलती हैं और सागर-
तट पर फेनिल मुसकान की रेखा खिंच जाती है। मृत्यु-
दूती लहरें बच्चों को अर्थहीन संगीत सुनाती हैं—
जैसे मां पालने में लेटे अपने शिशु के लिए लोरियां
गाती है !

असंख्य लोकों के तट पर बालकों का मेला लगा है!
पथहीन आकाश में तूफान आते हैं, पथहीन सागर की
तरंगों में जहाज़ टकराते हैं। मौत आज़ाद होकर घूम
रही है, लेकिन बच्चे किनारे पर खेल रहे हैं!
असंख्य लोकों के समुद्र-तट पर बालकों का मेला लगा है!

अरुणाई

नींद में सोए बालक की पलकों पर प्रथम किरण कहां से उतरी ? कोई जानता है ?

हां, सुनते हैं कि कुछ दूर पर एक परियों का गांव है जो जुगनुओं के धीमे-धीमे प्रकाश से प्रकाशित जंगल की घनी छाया में बसा हुआ है। वहां दो कलियां खिली हुई हैं। वहीं से वे बालकों की पलकों को चूमने के लिए उतरती हैं !

बालक के अधरों पर खेलती मुसकान कहां से आई ? कोई जानता है ?

हां, सुनते हैं, दूज के चांद की तरुण, अछूती किरण ने एक बार वासंती मेघ के कोर का स्पर्श किया था। पहले-पहल वहीं ओस से भीगी उषा के स्वप्नों में मुसकान का जन्म हुआ था। वही मुसकान बालक के अधरों पर खेलती है !

बालक की देह पर मधुर, स्निग्ध अरुणाई कहां से उतरी ? कोई जानता है ?

हां, जब उसकी माता केवल तरुण बाला थी तभी इसी अरुणाई ने उसके हृदय को, मौन प्रेम के स्निग्ध मधुर रहस्य में आवृत कर लिया था—यही स्निग्ध माधुर्य बालक के देह पर अवतरित हुआ है !

समाधान

मेरे बच्चे !
जब मैं तेरे लिए रंगीन खिलौने लाता हूं—
मेरा समाधान हो जाता है, क्यों बादलों में और पानी पर रंगों
की होली होती है, और किसलिए फूलों की पंखुड़ियां
रंगीन हैं।

जब मैं तुझे नृत्य कराने के लिए गीत गाता हूं—
मुझे समझ आ जाता है, क्यों वृक्ष के पत्तों में गीत का स्वर
है, और किसलिए सागर की तरंगें अपना गीत श्रवणो-
त्सुक पृथ्वी के हृदय को निरन्तर सुनाती हैं।

जब मैं तेरे लोभी हाथों में मीठे पकवान रखता हूं—
मुझे समझ आ जाता है, क्यों फूलों की सुराही में मधुर सुधा
रखी है और किसलिए फूलों में मीठे रस भरे हैं।

जब मैं तुझे हंसाने को तेरा चुम्बन करता हूं—
मैं समझ जाता हूं कि प्रभात में आकाश से फूटती आनन्द-
धाराओं का रहस्य क्या है, और बसन्त की हवा जब
मेरे शरीर का स्पर्श करती है तो मुझे रोमांच क्यों हो
जाता है।

आंचल का दीप

उस एकान्त नदी के ढलवान रास्ते पर जहां लम्बी-लम्बी घास उगी हुई थी, मैंने उससे कहा—"सुन्दरि ! तू अपने आंचल से इस दीपक को ढके कहां जा रही है? यह दीपक मुझे दे दे, मेरी कुटिया में गहरा अंधेरा छाया है।"

उसने अपनी कजरारी आंखों को क्षण-भर के लिए मेरे चेहरे पर गड़ाते हुए कहा—"मैं आई हूं दिन ढलने पर अपना दीपक नदी की धारा में बहाने के लिए।"

मैं आश्चर्य से देखता रहा, उसका टिमटिमाता दीपक नदी की लहरों पर निष्प्रयोजन बहा जा रहा था !

रात का अंधेरा जब गहन होता जा रहा था, मैंने उससे पूछा—"सुन्दरि ! तेरा घर प्रकाश से जगमगा रहा है। अब तू यह दीपक लेकर कहां चली ? यह दीपक मुझे दे दे, मेरी कुटिया में गहरा अंधेरा है।"

उसने अपने कजरारे नेत्रों से मेरे चेहरे पर सन्देह-भरी नजर डालते हुए कहा—"मैं यह दीपक शून्य प्रकाश को अर्पित करने आई हूं।"

मैं आश्चर्य से देखता रहा ; उसकी दीप-शिखा आकाश की शून्यता में निरुद्देश्य जलती जा रही थी !

चन्द्रहीन काली अमावस रात में मैंने उससे पूछा—"सुन्दरि !
इस जलते दीपक को अपने हृदय के समीप रख किसकी
खोज में चली हो ?"

वह एक क्षण के लिए ठिठक गई, फिर कुछ सोच मेरी ओर
दृष्टिपात करके बोली—"मैं अपना यह दीपक विश्व की
दीप-माला के उत्सव में सम्मिलित करने के लिए आई हूं।"

मैं आश्चर्य से देखता रहा; उसका छोटा-सा दीप सहस्रों द्वीपों
के प्रकाश में विना प्रयोजन लीन होता जा रहा था !

मुक्त विहान

तू ही मुक्त प्रकाश है और तू ही आकाश-स्थित घोंसला भी है !

हे सुन्दर ! यह तेरा प्रेम ही है जो इस घोंसले में प्रसुप्त आत्मा को अपने रूप; गन्ध और स्पर्श से आवृत करता है।

मौन उषा अपने हाथ में सुन्दर पुष्प-माला से सजी सुनहरी डाली लेकर पृथ्वी का अभिषेक करने आती है !

और यह सन्ध्या, निर्जन-नीरव घाटियों पर अछूते राह से चलती, अनंत प्रशान्ति के पश्चिमी सागरों से अपने स्वर्ण-कुम्भ में शान्ति का शीतल अमृत भरकर ला रही है !

किन्तु जहां आत्मा के मुक्त विहान के लिए अनंत आकाश फैला हुआ है, वहां निष्कलंक श्वेत ज्योत्स्ना का ही विस्तार है—वहां न रात्रि है, न दिवस ; न आकार है, न रंग ; और इतना नीरव है वह कि शब्द की तो वहां कभी किसी काल में भी पहुंच नहीं हो सकती !

रहस्यमय

यह वही है जो मेरे अंतरतम में बैठ अपने गूढ़ रहस्यमय स्पर्श
से मेरी आत्मा को जगाता है।

यह वही है जो इन आंखों में अपना जादू भरता है और
आनन्द से मेरे हृदय के तारों पर सुख-दुःख के तराने
गाता है।

यह वही है जो सोने-चांदी की तारों में माया का ताना-बाना
बुनता है और अपने चरण इस लोक में रखता है—
जिसके स्पर्श से आनन्दविभोर हो मैं आत्मविस्मृत
होता हूं।

दिन पर दिन आते हैं, युग पर युग बीतते हैं, पर यह वही
है जो मेरे हृदय को विविध नामों, विविध रूपों और
सुख-दुःख की विविध तरंगों से आप्लावित करता है।

जीवन-धारा

जो जीवन-धारा दिन-रात मेरी नसों में प्रवाहित हो रही है,
वही विश्व में उसी गति व लय-तान के साथ चल
रही है !

यही जीवन-धारा है जो सानन्द पृथ्वी की धूल से फूटकर
हरी घास के कोंपलों के रूप में प्रकट होती है और यह
वही है जो असंख्य नवपल्लवों और फूलों के रूप में
प्रस्फुटित होती है।

यही वह जीवन है जो समुद्र की तरंगों के पालने में जीवन
और मृत्यु, आरोह और अवरोह बनकर स्थित है।

इस जीवन के स्पर्श से ही मेरे तन-मन में रोमांच होता है ;
और, युगों के नृत्य में जो जीवन का कंपन छिपा है उससे
मेरा रक्त कम्पित हो रहा है—यही प्रतीति मेरे अंतर में
अभिमान भर देती है !

चरम लक्ष्य

तेरे उपहार मेरे पास आकर भी तेरे पास लौट जाते हैं
हमारी पूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति करके सम्पूर्ण रूप में
वापस चले जाते हैं।

नदी की अजस्र जल-धारा हमारे खेतों को सींचने के बाद तेरे
चरण धोने को वापस चली जाती है।

फूल अपनी सुगंध से पवन को सुवासित करते हैं, किन्तु इनका
भी अंतिम लक्ष्य तुझपर अर्पित होना ही है।

तेरी पूजा संसार को दीन नहीं बनाती, तेरी भिक्षा भिखारी
को कंगाल नहीं बनाती।

कवि के गीतों में सब जन अपनी मनोवांछित भावनाओं का
प्रतीक देखते हैं;

किंतु उनका चरम लक्ष्य केवल तेरा ही संकेत करता है;
तेरा ही संकेत करता है।

बन्धन-मुक्ति

वैराग्य-साधन में ही मेरी मुक्ति नहीं है।
अनुराग के हज़ारों बन्धनों में ही मुझे मुक्ति का आनन्द अनु-
भव होता है।

मैं अपनी दुनिया के असंख्य दीपों को तेरी ज्वाला से जला
लूंगा, और तेरे मन्दिर की यज्ञवेदी पर रख दूंगा!

नहीं, मैं अपनी इन्द्रियों को घोर संयम के सीखचों में बन्द
नहीं करूंगा। मेरे दर्शन, श्रवण और स्पर्श में तेरा
आनन्द भरा होगा!

मेरे सब भ्रम आनन्द-यज्ञ की समिधा बनकर प्रकाशित होंगे
और मेरी सब वासनाएं प्रेम-फल के रूप में परिपक्व
होंगी!

अखंडअन्वेषण

जब सब कुछ नया था, सृष्टि का नया सृजन हुआ था, जब तारे नई आभा से चमक रहे थे, तब सब देवता आकाश में एकत्र हुए। सबने मिलकर गीत गाया—"ओह, कैसी दिव्य पूर्णता है, विश्व में कैसी पूर्णता है!"

इसी बीच अचानक कहीं से आवाज़ आई—"एक तारा कहीं खो गया है, ज्योति-भरे दीपों की माला एक स्थान पर टूट गई है। वह तारा कहां गया?"

देवताओं की वीणा के सुनहरी तार मौन हो गए। चारों ओर से व्याकुल स्वरों में पुकार मच गई—"ओह! वह खोया हुआ तारा ही तो सर्वश्रेष्ठ तारा था, वही तो सम्पूर्ण सृष्टि के ताज का एकमात्र चमकता हीरा था।"

उस दिन से उस तारे की अनन्त खोज जारी है। सब एक स्वर से यही कह रहे हैं कि उसके साथ विश्व ने अपना अखण्ड आनन्द खो दिया।

केवल रात के गहन अन्धकार में तारे मुसकाते हैं और एक-दूसरे के कान में धीमे से कहते हैं—"यह अन्वेषण व्यर्थ है! अखण्ड पूर्णता तो अब भी विश्व के कण-कण में स्वयं व्याप्त है!"

शुभ्र मेघ

वसंत-काल के व्यर्थ उड़ते हुए अवशिष्ट मेघ-खंडों की तरह मैं भी निष्प्रयोजन घूम रहा हूं।

मेरे सदा प्रकाशित सूर्य। तेरे स्पर्श ने अभी तक इनको जल-कणों में द्रवित नहीं किया, जिससे ये कण तेरे प्रकाश में खो जाते। इसलिए; मैं अभी तक तेरी विदाई के काल—मास, वर्ष और संवत्सरों की गणना कर रहा हूं; कब इनका अन्त होगा ?

यदि यही तेरी इच्छा है, यही तेरा खेल है, तो भी मेरी रिक्तता को रंगों से भर दे, स्वर्ण से चमका दे, उड़ती हवा पर तैरा दे, और सर्वत्र फैला दे !

और फिर, यदि तू चाहे तो मैं, दिन का खेल समाप्त होने पर, रात के अंधेरे में पिघलकर वाष्प बन जाऊंगा, या प्रभात की मुसकान बन जाऊंगा या स्फटिक-सा निर्मल ओस का कण बनकर पृथ्वी पर गिर जाऊंगा !

उपवन

अवकाश के दिनों में मैं बहुत बार अपने व्यर्थ नष्ट किए क्षणों के लिए व्याकुल हो चुका हूं। किन्तु, नष्ट कहां होते हैं वे क्षण ? मेरे प्रभु ! मेरे जीवन का प्रत्येक क्षण तो तूने अपने हाथों में ले लिया है।

हर वस्तु के अन्तराल में बैठकर तू उसे विकसित कर रहा है, बीज को अंकुर, कलियों को फूल और फूलों को फलों का रूप दे रहा है।

थककर मैं अपने बिछौने पर सोने चला था, सोचता था मेरे कामों का अन्त नहीं होगा,

किन्तु, सुबह उठकर देखा तो मेरे उपवन के सब फूल स्वतः खिल गए थे। मेरे आश्चर्य की सीमा नहीं रही !

अनन्त समय

प्रभु ! तेरे हाथों में अनन्त समय है। तेरे समय की घड़ियां गिननेवाला कोई क्या है ?

अनगिनत दिन और रात एक के बाद एक आते और जाते हैं। युगों के युग उपवन के फूलों के समान खिलते और झड़ते जाते हैं। तुझे इसकी चिन्ता नहीं। तेरी प्रतीक्षा में अधीरता नहीं आती।

एक वनफूल को पूर्ण विकसित करने में ही तू अनेक सदियों का समय व्यतीत कर सकता है।

मेरे पास व्यर्थ खोने को एक भी क्षण नहीं। समय की यह कमी मुझे अपना काम समाप्त करने में अस्तव्यस्त कर देती है। मैं एक क्षण का भी विलम्ब सहन नहीं कर सकता।

इसीलिए मेरा समय उन झगड़ालू दावेदारों को बांटने में ही बीत जाता है जो मेरे समय पर अधिकार का दावा करते हैं। और तेरी यज्ञवेदी अंत तक पूजा के अर्घ्य-नैवेद्य से रिक्त रह जाती है।

दिवसांत पर मैं विलम्ब के डर से अधीर हो जाता हूं; शंकित होता हूं कि कहीं तेरे मन्दिर-द्वार बन्द न हो जाएं; किन्तु आश्चर्य ! जाने के लिए हर बार पर्याप्त समय शेष रहता है।

मृत्यु-वन्दन

प्रभु ! आज तेरा संदेश लेकर मृत्यु मेरे द्वार पर आई है।
उसने यहां पहुंचने के लिए अज्ञात सागरों को पार
किया है। रात अंधेरी है, मेरा हृदय भयभीत है
फिर भी, दीपक हाथ में लेकर मैं अपना द्वार खोलूंगा
और उसका नतमस्तक अभिवादन करूंगा। तेरा दूत
मेरे द्वार पर आया है।

हाथ जोड़ और आंखों में आंसू भरकर उसकी पूजा करूंगा
और उसके चरणों में अपने हृदय का अनमोल खज़ाना
रख दूंगा !

वह अपना निर्दिष्ट कार्य करके लौट जाएगी और उसके पीछे
मेरी निर्जन कुटी में मेरा अकेला 'अहं' ही तुझे
अंतिम भेंट देने के लिए मेरे पास शेष रह जाएगा !

खोज

हृदय में प्रबल आशा लिए मैं अपने घर के कोने-कोने में उसे खोज रहा हूं ; वह नहीं मिलता।

मेरा छोटा-सा घर है, जो इसमें खो गया वह फिर कभी नहीं मिला।

तेरा भुवन इतना विशाल है ! हां, उसे खोजता-खोजता मैं यहां तेरे द्वार तक पहुंच जाता हूं।

सन्ध्याकाश के स्वर्ण-मंडित मंडप के नीचे खड़े होकर मैं बड़ी उत्सुकता से तेरी ओर देखता हूं !

यहां मैं अनन्त सागर के उस तट पर पहुंच जाता हूं जहां आकर कुछ भी नष्ट नहीं होता। किंतु जहां आंसुओं की ओट में आशा, सुख, आनन्द तथा संसार के सब आकार ओझल हो जाते हैं।

नाथ ! मेरे रिक्त जीवन को उस सागर में पूरी तरह डुबा दो ! और एक बार फिर मुझे विश्व के उस व्यापक विभुत्व का मधुर स्पर्श होने दो।

भग्न-मन्दिर

हे भग्न मंदिर के देवता ! वीणा की खंडित तारें अब तेरा स्तुतिगान नहीं करतीं। संध्याकाल की घंटियां तेरी आरती का संकेत नहीं देतीं। तेरे निकट का पवन प्रशान्त और मौन है।

तेरे भग्न कुटीर में वसन्त हवा आती है। हवा में फूलों का सुवास भरा है। लेकिन, अब ये फूल तेरा नैवेद्य नहीं वनते।

तेरा पुराना उपासक अव भी तेरी पूजा की कामना लेकर व्यर्थ ही आता है और लौट जाता है। शाम को, जब दीपक का प्रकाश धूलि की धुंध में मिल जाता है, वह थका-हारा उपासक, हृदय में अपार तृप्ति छिपाए, इस टूटे मन्दिर में आता है।

हे टूटे मन्दिर के देवता ! कई उत्सवों के दिन समारोह-रहित आते हैं और कई पूजा की रातें दीप-रहित बीत जाती हैं !

चतुर कलाकार बहुत-सी नई प्रतिमाएं बनाते हैं जो समय आने पर अज्ञात की पवित्र धारा में बहा दी जाती हैं !

केवल टूटे मन्दिर का देवता इस अमर उपेक्षा में अपूजित रह जाता है !

अवशेष

मैं जानता हूं, वह दिन भी आएगा जब नेत्रों के सामने से
पृथ्वी ओझल हो जाएगी और आंखों पर अन्तिम पर्दा
डालकर प्राण चुपचाप इस पिंजरे से उड़ जाएंगे !

तब भी तारे रात को चमकेंगे और प्रभात में सूर्य उदय होगा !
समुद्र की लहरों के समान समय की घड़ियों का आरोह-
अवरोह भी होगा और उससे सुख-दु:ख के उच्छ्वास भी
निकलेंगे !

जब मैं जीवन की घड़ियों के इस अन्त की कल्पना करता हूं
तो समय की सीमाएं टूट जाती हैं और मैं मृत्यु के
प्रकाश में तेरी दुनिया के बिखरे हुए वैभव को नये रूप
में देखता हूं। इसकी तुच्छ से तुच्छ, निम्न से निम्न
जगह में और अल्प से अल्प प्राणी में भी चमत्कार
दिखाई देता है।

मेरा कामनाओं का संसार और मेरे हाथ में आए दुनिया
के खज़ाने—सब एक-एक कर मेरे सामने से गुज़रते हैं—
गुज़रने दो ! मेरे पास वही शेष रहने दो जिसका मैंने
सदा तिरस्कार किया है और जिसे पाने को सदा उदासीन
रहा !

यात्रा का अन्त

मित्रो! विदाई के इस अवसर पर मेरे लिए मंगल-कामना करो।

आकाश पर प्रभात की अरुणाई छाई है, और मेरा मार्ग बहुत
ही रमणीक है।

यह न पूछो कि मेरे पास साथ ले जाने को कौन-सा पाथेय है।
खाली हाथ किन्तु आशा-भरे हृदय से मैंने यात्रा प्रारम्भ
की है।

अपने विवाह का मंगल-परिधान पहनकर मैं चलूंगा, यात्रा
की मामूली लाल-खाकी वर्दी नहीं। मार्ग में संकट हैं,
फिर भी मैं निर्भय हूं।

यात्रा के अंत में संध्या का तारा मेरा स्वागत करेगा और
राजद्वार पर शाम की शहनाई मेरा अभिनंदन
करेगी!

विदा

जाने की छुट्टी मिल गई।
शुभकामना करो, मेरे बन्धु !
प्रणाम करके तुमसे विदाई मांगता हूं।
अंतिम विदा !

यह लो मेरे द्वार की तालिका—इस घर पर अब मेरा कोई स्वत्व नहीं। विदाई के दो शब्दों के अतिरिक्त तुमसे कुछ नहीं चाहता।

लंबे काल तक हम साथ-साथ रहे। मैंने तुम्हें दिया कम, लियाअधिक। अब नया दिन निकल आया है, मेरे अंधेरे में जलनेवाला दीपक बुझ गया है।
मुझे दूर देश से निमन्त्रण आया है—
प्रस्थान के लिए अब मैं तैयार हूं—
विदा !

विसर्जन

अब यह सब व्यर्थ है, निष्प्रयोजन है !
समय आ गया है कि इस सबका विसर्जन कर दूं—
जानता हूं, तेरे हाथों से यह सब अनायास हो जाएगा।
जो कुछ करना शेष है अविलंब हो जाएगा।
इसीलिए हे मेरे हृदय ! चुपचाप अपनी हार मान ले, जिस
स्थान का सम्मान तुझे प्राप्त है उसीमें सन्तोष कर।
जो नहीं है, उसकी आकांक्षा भी छोड़ दे।

मेरे दीपक की लौ हवा के छोटे-से झोंके में भी बुझ जाती है।
उसे फिर जलाने की चिन्ता में मैं अन्य सारे
काम-काज बार-बार भूल जाता हूं !
इस बार मैं सावधान रहूंगा; ज़मीन पर चटाई बिछाकर
अंधेरे में अकेला ही संतोष से बैठा रहूंगा !
मेरे प्रिय ! जब तेरा जी चाहे, चुपचाप आना और मेरे पास
बैठ जाना।

अज्ञात

मुझे गर्व था कि मैं तुझे जानता हूं !
मेरी सभी रचनाओं में दुनियावाले तेरी छवि देखते हैं।
यहां आकर वे पूछते हैं, "यह कौन है ?"
मैं अवाक् रह जाता हूं। "कौन जाने !" यही कह देता हूं।
वे मुझे भला-बुरा कहते हुए अवज्ञा से मुख फेरकर चले जाते हैं।

तेरी छवि मुस्कराती रहती है !
तेरी कहानी को अमर गीतों में बांधता हूं। मेरे हृदय के निर्झर से तेरे गीत स्वतः बहते हैं।
वे आकर पूछते हैं, "इन गीतों का अर्थ क्या है ?"
उन्हें क्या कहूं ! यही कह देता हूं, "कौन जाने, क्या अर्थ है इनका !"
वे अवज्ञा से मुख फेरकर चले जाते हैं।
तू मुस्कराता हुआ बैठा रहता है !

दिनानुदिन

प्राणपति ! क्या दिन-प्रतिदिन मुझे तुम्हारे सामने आना
होगा ? दिन-प्रतिदिन हाथ बांधकर तुम्हारे सामने खड़ा
रहना होगा ?
क्या इस सूने नीरव आकाश के नीचे इसी तरह सदा नतमस्तक
खड़ा रहना होगा ?
इस कर्म-प्रधान विश्व में श्रम और संघर्ष के तुमुल कोलाहल
और वेग से भागते जन-समूह में, क्या मुझे दिन-प्रतिदिन
तुम्हारे सामने नतमस्तक खड़ा रहना होगा ?
जब मेरा काम समाप्त हो जाएगा, तब भी क्या मुझे इस सूने
नीरव आकाश के नीचे इसी तरह तेरे सामने खड़ा
रहना होगा !

मन्द स्वर

मेरे प्रभु की यही इच्छा है, अब मैं कुछ भी ऊंचे स्वर में न
पुकारूं ! अब मुझे सब कुछ मन्द स्वर में कहना होगा।
मेरे हृदय की व्यथा गीतों की गुनगुनाहट में ही व्यक्त
होगी !

लोग राजा के बाज़ार की ओर भाग रहे हैं। वहां सब चीज़ों
के व्यापारी आए हैं। क्रय-विक्रय हो रहा है, किन्तु
मैंने दिन-दोपहर की व्यग्रता के बीच असमय ही काम-
काज से हाथ खींच लिया।

अब क्यों न असमय ही मेरे उपवन में भी फूल खिल उठें
और क्यों न असमय ही मधुमक्खियां अपना मधुर
गुंजन आरंभ कर दें !

भले-बुरे के माप-तोल में ही मेरी सारी उम्र गुज़र गई। मेरे
अवकाश के साथी की इच्छा है कि अब मैं केवल
उससे खेलूं। न जाने, किस निष्प्रयोजन कार्य के लिए
मुझे बुलाया है !

ब्रह्ममाया

मैं अपने महत्त्व को बढ़ाता जाऊं, उसका चारों ओर विस्तार
करता जाऊं, उसकी रंगीन छाया तेरी उज्ज्वल ज्योत्स्ना
पर अंकित हो—यही तेरी माया है।

तू अपने ही आपको स्वतः भागों में विभक्त करता है और
उन विभिन्न रूपों को विविध नाम दे देता है। तेरे इस
स्वयं-विभाजन का ही एक रूप मेरी देह है।

तेरे प्रखर गीत का गुञ्जन ही आकाश के अनेक रंगों के अश्रु-
कणों में प्रतिध्वनित हो रहा है; वही गुञ्जन विविध
रूपों की मुस्कान, भय और आशा के रूपों में व्यक्त
होता है! लहरें उठती हैं और गिर जाती हैं, स्वप्न
बनते हैं और मिट जाते हैं, मुझमें ही तेरी जय-पराजय
दोनों का प्रतिबिम्ब है!

जो यवनिका तूने संसार की नाट्यशाला में खड़ी की है; उसपर
दिन और रात्रि की तूलिका से असंख्य चित्र बने हुए
हैं। उसके पीछे तेरा सिंहासन है, जो आश्चर्यपूर्ण
तिरछे-बांके रहस्यों के ताने-बाने से बुना गया है; जिसमें
एक भी सीधी रेखा नहीं है।

संपूर्ण आकाश तेरे-मेरे महान प्रदर्शनों से ढका हुआ है।
तेरी-मेरी सुर-तानों से समस्त द्युलोक गूंज रहा है, तेरी-
मेरी आंखमिचौनी में युगों के युग बीतते जाते हैं!

करुण छाया

तेरी सूर्य-रश्मि अपनी भुजाओं को फैलाकर मेरी इस पृथ्वी
पर आती है और मेरे आंसू, उच्छ्वास और गीतों से
बने बादलों को तेरे चरणों तक ले जाने के लिए दिन-
भर मेरे द्वार पर खड़ी रहती है !

तू, बड़े चाव से अपने तारों-भरे वक्ष पर धुंधले बादलों की
ओढ़नी ओढ़ लेता है, उसे कई रूपों और तहों में
बदलता रहता है ; और उसे प्रतिक्षण बदलनेवाली
आभाओं में रंगता रहता है !

तेरी वह ओढ़नी बड़ी हलकी, अश्रु-स्निग्ध और मनहर सांवले
रंग की है, तभी मुझे इसका मोह है। और यही कारण
है कि वह तेरे अतिशय शुभ्र प्रखर प्रकाश को अपनी
करुण छाया से ढक लेती है !

प्रकाश-धारा

प्रकाश, मेरे प्रकाश, विश्वव्यापी प्रकाश, नयनाभिराम प्रकाश,
हृदय-मधुर प्रकाश !

यह प्रकाश ही मेरे जीवन के केन्द्र-बिन्दु पर नृत्य करता है;
यह प्रकाश ही मेरे प्रेम की तारों को झनझनाता है;
तब आकाश के द्वार खुल जाते हैं, पवन वेग से दौड़ने
लगता है और पृथ्वी का हास्य विश्व के कण-कण में
व्याप्त हो जाता है !

तितलियां प्रकाश के अगाध नील जल पर अपने पंखों से
तैरती हैं। लिली और जूही की कलियां प्रकाश-तरंगों
के शिखर पर खिल उठती हैं।

यही प्रकाश हर बादल को स्वर्णिम आभा से रंग देता है।
और यही प्रकाश असंख्य मोतियों को बेपरवाही से
बिखेर देता है।

उस समय पत्ते-पत्ते पर उल्लास छा जाता है और असीम
प्रसन्नता की लहर दौड़ जाती है।

स्वर्ग की प्रकाश-धारा ने अपने तटों को डुबो दिया और उसका
अतुल जल-प्रवाह चारों ओर फैल गया है !

चूड़ियां

असंख्य तारों और विविध रंगों के रत्नों से जड़ी हुई तेरी चूड़ियां कितनी सुन्दर हैं ! किन्तु मुझे तेरी तलवार ही अधिक सुन्दर लगती है, जिसकी धार बिजली की तरह तेज़ और विष्णु के दिव्य वाहन गरुड़ के पंखों की तरह, जो सूर्यास्त की रक्तिमा पर इतनी सुन्दरता से सधे हुए हैं, बांकी है !

यह तलवार मृत्यु के अन्तिम आघात पर जीवन की मधुर वेदना के समान कांपनेवाली है और यह उस आत्मिक ज्वाला की तरह पवित्र है जो एक ही लपट में पार्थिव अस्थि-मज्जा को भस्म कर देती है !

तेरी चूड़ियां सचमुच बहुत सुन्दर हैं ; किन्तु द्युलोक के स्वामी ! तेरी तलवार अलौकिक सौन्दर्य का अतुलनीय प्रतीक है, जिसके देखने से ही नहीं, विचार से भी आत्मा कांप उठती है !

अतिथि

रात का अंधकार बढ़ गया था। हमारे दिन के सब काम निपट गए थे। हमने सोचा, आनेवाले सभी अतिथि आ चुके, गांव के प्रमुख द्वार बन्द कर लिए। केवल कुछ ने कहा—"अभी राजा की सवारी आनेवाली है।"

हम हंस दिए—"नहीं, यह नहीं हो सकता।"

फिर, शायद द्वार पर हल्की-सी आहट हुई. हमने समझा—हवा का झोंका होगा। दीये बुझाकर हम सो गए। केवल कुछ ने कहा—"यह राजदूत है!" हम हंस दिए—"नहीं, यह हवा का झोंका है।"

फिर आधी रात के सुनसान में एक आवाज़ उठी। सोते-सोते सोचा, यह वही दूर बादलों की गरज है। पृथ्वी कांपी, दीवारें हिलीं, हमारी नींद में विघ्न पड़ गया। केवल कुछ ने कहा—"यह राजा के रथ का स्वर है।" हमने अलसाई आवाज़ में कहा—"नहीं, यह तो केवल बादलों की गड़गड़ाहट है।"

रात अभी अंधेरी ही थी कि दुन्दुभि बज उठी। आवाज़ आई—"उठो, विलंब न करो।" हमने डर से कांपते हुए दिल थाम लिया। कुछ ने कहा—"वह देखो, राजा की रथध्वजा आकाश में फहरा रही है।" हम चौंककर

खड़े हो गए और बोल उठे—"समय नहीं रहा, देरी न करो!"

राजा की सवारी आ गई थी, किन्तु पूजा का दीपक कहां था? जयमाल कहां थी? उसके बैठने को सिंहासन कहां था? उसके स्वागत के लिए सुसज्जित मंडप कहां था? कुछ ने कहा—"यह व्याकुलता व्यर्थ है, उसका खाली हाथ अभिवादन करो, उसे अपने शून्य घरों में निःसंकोच लाओ!"

"द्वार खोल दो, स्वागत के लिए शंखों पर तुमुल ध्वनि होने दो। अपने राजा का, जो रात के निविड़ अंधेरे में आया है, अपने अंधकार-भरे घरों में स्वागत करो। आकाश में बिजली की कड़क है, अंधकार विद्युत्-प्रकाश में कांप रहा है। ऐसे समय अपनी फटी-पुरानी चटाई लाकर आंगन में बिछा दो।"

हमारी अंधेरी रातों का राजा अचानक ही आंधी-तूफान के साथ आया है!

कृपण

मैं उस समय गांव के द्वार-द्वार पर भिक्षा मांग रहा था, जब
तेरा स्वर्ण-रथ दूरी पर दिखाई दिया। मैंने मानो कोई सुन्दर
सपना-सा देखा हो। मेरे विस्मय की सीमा न थी कि
यह राजाओं का राजा कौन है, जो इधर आ रहा था?
मेरी आशाओं ने सिर उठाया, सोचा, शायद मेरे दुर्भाग्य की
घड़ियां समाप्त हो गईं। मैं वहीं खड़ा हो गया और
सोचने लगा, कब रथ की धूलि में स्वर्ण-मुहरें गिरेंगी
और कब राजा के हाथ भिखारियों की झोलियां भरने
को उठेंगे?

वह रथ अचानक वहीं ठहरा जहां मैं खड़ा था। तेरे नेत्र
मुझसे मिले, तू मुस्कराता हुआ रथ से नीचे उतरा।
मैंने सोचा, मेरा भाग्य-सूर्य अब उदय होने ही वाला
है। तब अचानक तूने मेरे पास आकर अपना दक्षिण
हाथ मेरी ओर बढ़ा दिया और कहा—"मुझे देने को
तू जो लाया है, दे दे।"

कितना विचित्र उपहास था! एक राजा ने भिखारी के सामने
भिक्षा के लिए हाथ फैलाया! मैं कुछ देर विस्मय-
मुग्ध खड़ा देखता रहा, फिर अपनी झोली से चावल
की सबसे छोटी कनी निकालकर तेरे हाथ में रख दी

किन्तु मेरे आश्चर्य की सीमा नहीं रही जब दिन ढलने पर
मैंने अपनी झोली खाली की और देखा कि मेरी
झोली में पड़े चावल की कनियों में एक कनी सोने
की भी थी।

मैं रोने लगा, बेहद रोने लगा। जो कुछ मेरी झोली में
था, वह सभी क्यों न तुझे दे डाला!

दीर्घयात्रा

मौन-भरा प्रभात-सागर पक्षियों के चहचहाने की आवाज़ में
फूट पड़ा ; मार्ग के फूल उद्वेग से खिल उठे और स्वर्ण
के कण क्षितिज पर मंडराते मेघ-खंडों पर बिखर गए—
किन्तु हम व्यस्तभाव से आगे बढ़ते गए।

हमने न गीत गाए, न मंगल-वाद्य बजाए ; न ही हम गांव
के मेले में सौदा करने गए ; न हम एक शब्द ही बोले ;
न ही मुस्कराए ; एक क्षण के लिए भी हमने विराम
नहीं लिया। अपने कदमों में और भी वेग भरकर हम
आगे ही आगे बढ़ते गए।

आखिर, सूर्य मध्य आकाश में आ गया। कबूतरों ने छांव में
आश्रय ले लिया। दोपहर की लू में वृक्षों के सूखे पत्ते
फड़फड़ाने लगे। चरवाहा घने वृक्ष की छाया में सोकर
सुन्दर सपने लेने लगा। मैं भी सरोवर के निकट घास
पर पैर पसार लेट गया।

मेरे साथी मेरा उपहास करने लगे। गर्व से सिर ऊंचा कर
वे आगे बढ़ते गए। पीछे मुड़कर देखा भी नहीं। चलते-
चलते वे नीलाकाश की नीलिमा में लुप्त हो गए।

उन्होंने असंख्य पर्वतों और दूर-दूर के विचित्र देशों का
परिभ्रमण किया। लेकिन मैं वहीं घास पर अकेला लेटा
रहा।

आत्मग्लानि और जनापवाद ने मुझे कई बार टोंच-टोंचकर
उठाना चाहा किन्तु मुझपर कोई प्रभाव नहीं हुआ,
आखिर मैंने तिरस्कार की सुखद गहराई में और उस
धुंधले आकाश की छाया में अपने को बिलकुल खो
दिया!

तब, रवि-किरणों से अलंकृत हरित उदासी की मूर्छना मेरे
हृदय पर छानी शुरू हो गई। मैं यह भी भूल गया कि
इस यात्रा के लिए मैंने क्यों प्रस्थान किया था। और
तब अंत में मैंने छायामय गीतों की रहस्यमूर्ति के सामने
सर्वस्व अर्पित कर दिया!

अन्त में, जब नींद से जागा और आंखें खोलीं, मैंने तुझे
अपने पार्श्व में खड़ा पाया। तू ही मेरी निद्रा की
शून्यता को अपनी मुस्कानों से भर रहा था। न जाने
क्यों मैं व्यर्थ ही डर रहा था कि यह यात्रा लम्बी और
थका देनेवाली होगी और तेरे समीप पहुंचने का
संघर्ष बड़ा कठिन होगा!

प्रथम किरण

सारी रात उसकी राह देखते बीत गई।

अब प्रभात का समय हुआ। कहीं ऐसा न हो कि वह मेरे सो जाने के बाद अचानक ही द्वार पर आ जाए। मित्रो, मेरे द्वार के कपाट खुले रखना—उसे आने से रोकना मत।

उसके पैरों की आहट से ही यदि मेरी नींद न टूट जाए तो तुम मुझे मत जगाना। मैं प्रभात में पक्षियों के कलरव या उषागमन के उत्सव की किलकारियों से चौंककर नहीं उठना चाहता; मुझे सोने देना। यदि मेरे प्रभु भी अचानक द्वार पर आ जाएं, तो भी मुझे चैन की नींद सोने देना!

मेरी नींद, मेरी अनमोल नींद, केवल उसका स्पर्श पाकर लुप्त हो जाने की प्रतीक्षा कर रही है। मेरी मुंदी आंखें केवल उसकी मुस्कान का स्पर्श पाने को अपनी पलकें उठाएंगी। वह मेरे सामने आएगा—जैसे कोई स्वप्न अंधेरी नींद से फूटकर बाहर आता है।

उसे आने देना, मेरी आँखों के सामने प्रकट होने देना, जैसे
सृष्टि की प्रथम किरण आई थी, प्रकृति का प्रथम रूप
सामने आया था! मेरी जागरित आत्मा का प्रथम रोमांच
उनके प्रथम दर्शन में ही हो—यही मेरी इच्छा है!

और, अपनी चेतना में वापस आना मेरे लिए प्रभु में वापस
जाना हो जाए—यही मेरी कामना है!

अमरता की मुहर

वह दिन था, जब मैं तुम्हारे सत्कार के लिए सर्वथा असावधान बैठा था। तुमने अचानक, अनजाने और अनिमन्त्रित ही एक साधारण व्यक्ति के वेश में मेरे हृदय में प्रवेश कर लिया। यहां आकर तुमने मेरे जीवन के अनेक विनश्वर क्षणों पर अमरता की मुहर अंकित कर दी।

आज, जब अचानक उनपर प्रकाश पड़ा, तुम्हारी मुहर पर मेरी नज़र गई तो मैंने देखा कि अमरता से अंकित वे दिव्य क्षण मेरे जीवन-पट पर हर्ष-विषाद की विस्मृत स्मृतियों के साथ धूलि में बिखरे पड़े हैं!

तुमने मुझे धूलि में खेलता देखकर घृणा से मुख नहीं मोड़ा। तुम मेरे पास आते गए—मैं तुम्हारी पद-ध्वनि सुनता रहा। धूलि में खेलते मैंने उस दिन तुम्हारे पैरों की जो आहट सुनी थी, वही आज विश्व के कण-कण से, आकाश के हर सितारे से, ध्वनित हो रही है!

मिलन-आशा

इसीमें मुझे आनन्द आता है—
मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करता रहूं, और अपलक देखता रहूं उस
मार्ग को जहां छाया प्रकाश की अनुगामिनी है और
वर्षा ग्रीष्म की अनुचर बनती है।

अब आकाश से संदेश लानेवाले दूत उस मार्ग पर आकर
मेरा अभिनन्दन करते हैं और वेग से चले जाते हैं।
मेरा हृदय हर्ष से भर जाता है और मुझे छूकर बहती
हुई हवा मीठे श्वास छोड़ जाती है।

तेरे द्वार पर प्रभात से संध्या तक यही आशा लगाए बैठा
रहता हूं कि अभी अकस्मात् ही वह दिव्य क्षण आ
जाएगा जब तुमसे साक्षात् भेंट हो जाएगी !

तब तक मैं अकेला बैठा कभी मुस्कराता हूं, कभी गाता हूं।
इस बीच यह देखो, मेरे आसपास का पवन मिलन की
सुवासित आशा से भर गया है !

मधुर स्वप्न

प्रियतम ! वहां सबसे पीछे हटकर उस घनी छाया की ओट में क्यों खड़े हो ? वे तुम्हें धकेल, धूल-भरे रास्ते पर गिरा, आगे बढ़ जाते हैं। मैं तुम्हारी पूजा की थाली लेकर यहां कब से प्रतीक्षा में बैठा हूं ! राहगीर आते हैं और मेरी थाली में से एक-एक फूल चुनकर ले जाते हैं। मेरी थाली रिक्तप्राय हो गई है।

प्रभात की वेला बीत गई, मध्याह्न भी बीता। संध्या की छाया में मेरी पलकें नींद से झुकने लगीं। घर लौटते हुए लोग मेरी ओर नज़र उठाते हैं और व्यंग्य से मुस्करा देते हैं। मैं लज्जा से सिर झुका लेता हूं। मैं यहां एक भिक्षु-कन्या की तरह दीनभाव से मुख को ओढ़नी से ढके बैठा हूं। लोग जब पूछते हैं—"क्या चाहिए ?" तब मैं चुपचाप सिर झुका लेता हूं, उत्तर नहीं देता।

हाय ! मैं उनसे यह भी नहीं कह पाता कि "मैं तुम्हारी राह में यहां बैठा हूं, तुमने आने का वचन दिया है।" यह कहते भी मुझे लाज आती है कि यह दरिद्रता से भरी झोली मैंने अपने शहंशाह के सत्कार के लिए रख छोड़ी

है। हाय ! इस गौरव को मैं अपने हृदय में, अंतराल में
ही छिपाकर रख लेता हूं।

आज इस हरी घास के मैदान पर बैठा-बैठा मैं आकाश की
ओर अपलक देख रहा हूं और तुम्हारे अचानक आ
जाने से इन स्वप्नों से दिल बहला रहा हूं—सारे प्रदीप
जगमगा उठे, तुम्हारे रथ पर स्वर्ण-ध्वजा फहरा उठी,
अपने रथ से उतरकर तुमने मुझे धूलि-धूसर पृथ्वी से
उठाकर अपने साथ रथ में बिठा लिया—फटे वस्त्रों
वाली, मलिन, अभिमान और शर्म से कांपती भिक्षु-
कन्या को अपने आंचल में ढक लिया; यह देखकर
लोग अवाक्-स्तंभित रह गए।

लेकिन यह स्वप्न, स्वप्न ही रहा। समय बीतता गया। तुम्हारे
रथ के पहियों का शब्द भी सुनाई नहीं दिया। रास्ते
पर सैकड़ों जुलूस जय-जयकार का तुमुल कोलाहल
करते गुज़र गए। केवल तुम्हीं उनकी छाया में सबसे
पीछे हटकर खड़े रहे। और यहां मैं ही प्रतीक्षा की
लंबी घड़ियों से थका-हारा अपने आंसुओं में दिल की
व्यथा को बहा डालने के लिए बैठा रहा!

करुणाधन !

मेरे करुणाघन ! मेरे प्रभु ! मेरा हृदय सूखा पड़ा है। बरसों से यहां मेघ नहीं आए। क्षितिज का नग्न रूप बड़ा भयंकर हो उठा है। कहीं हल्की-सी बदली भी नजर नहीं आती, कहीं से दो-चार बूंद पानी गिरने के भी लक्षण दिखाई नहीं देते।

तुम चाहो तो क्षण-भर में मृत्यु-सी काली डरावनी आंधी चला दो और बिजली के कोड़ों से आकाश के ओर-छोर को थर्रा दो। प्रभु ! इस निष्ठुर गर्मी को, जो हृदय को घातक नैराश्य से झुलसा रही है, वापस बुला लो !

अपनी करुणा के सजल मेघों को नीचे झुका दो प्रभु ! जैसे पिता के क्रोधपूर्ण नेत्रों से बालक की रक्षा करने के लिए माता अपने सजल नेत्रों को नीचे झुका देती है !

दिव्य स्वातन्त्र्य

जहां हृदय में निर्भयता है और मस्तक अन्याय के सामने नहीं
झुकता ;
जहां ज्ञान का मूल्य नहीं लगता ;
जहां संसार घरों की संकीर्ण दीवारों में खण्डित और विभक्त
नहीं हुआ ;
जहां शब्दों का उद्भव केवल सत्य के गहरे स्रोत से होता है ;
जहां अनर्थक उद्यम पूर्णता के आलिंगन के लिए ही भुजाएं
पसारता है ;
जहां विवेक की निर्मल जल-धारा पुरातन रूढ़ियों के मरुस्थल
में सूखकर लुप्त नहीं हो गई ;
जहां मन तुम्हारे नेतृत्व में सदा उत्तरोत्तर विस्तीर्ण होनेवाले
विचारों और कर्मों में रत रहता है ;
प्रभु, उस दिव्य स्वतन्त्रता के प्रकाश में मेरा देश जागरित हो !

प्रहार करो

मेरी यही भावना है—प्रभु ! प्रहार करो, प्रहार करो, मेरी
दीनता के मूल पर मेरे हृदय में प्रहार करो !
शक्ति दो, कि मैं सुख-दुःख के आघात को समभाव से सह
सकूं।
शक्ति दो, कि मैं अपने प्रेम को सेवा में फलित कर सकूं !
शक्ति दो, कि मैं दोनों को अपनाऊं और निष्ठुर सत्ता के
सामने कभी मस्तक न झुकाऊं !
शक्ति दो, कि मैं नित्य के छोटे संघर्षों से अपने मन को मलिन
न होने दूं !
शक्ति दो, कि मैं तुम्हारी आज्ञा के आगे अपनी सत्ता को प्रेम
से समर्पित कर सकूं !

विश्रांति

प्रियतम ! एक क्षण मुझे अपने पास बैठने का अवकाश
दे दे ! अपने हाथ के काम मैं बाद में निपटा लूंगा।

जब तू आंखों से ओझल हो जाता है, मुझे न शांति मिलती है,
न विश्राम मिलता है।

मेरा समस्त कार्य-भार तटहीन सागर की तरह विशाल और
दुरूह बन जाता है।

आज मेरे आंगन में अपने गर्म उच्छ्वासों के साथ वसन्त
आया है। आज मधुमक्खियां कलियों के कानों में मधुर
स्वर से गुनगुना रही हैं।

जी चाहता है—तेरे सामने चुपचाप बैठा रहूं, और निर्बाध
अवकाश के साथ जीवन के पूर्ण समर्पण का गीत गाता
रहूं !

○ ○ ○

मुद्रक : यूनाईटड आफसट प्रेस, देहली-६. 11276

रवीन्द्रनाथ टैगोर संसार के महान
साहित्यकारों में अपना विशेष
स्थान रखते हैं। उनकी अमर
कृति 'गीताञ्जलि' लाखों की
संख्या में बिक चुकी है।

रवीन्द्र के गीत दिव्य भावनाओं
से भरे हुए हैं। जन-साधारण भी
उन गीतों में अपने हृदय की
झंकार सन सकते हैं।